ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 27 मई 2018

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र

सप्ताह रविवार, 27 मई 2018 से 02 जून 2018

जयेष्ठ शु. – 13 ● वि० सं०–2075 ● वर्ष 60, अंक 21, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 195 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,119 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

पटना में 1100 बच्चों के लिए लगा चरित्र निर्माण शिविर

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा बिहार एवं डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल्स पटना, गया, भागलपुर तथा बक्सर प्रक्षेत्र द्वारा एक चरित्र–निर्माण शिविर डी.ए.वी. कैंट रोड खगौल में दिनांक 13 अप्रैल से 16 अप्रैल तक आयोजित किया गया। 49 विद्यालयों से लगभग 1100 बच्चे 200 शिक्षक – शिक्षिकाएँ दर्जनों उपदेशक एवं प्राचार्यगण इस शिविर में सम्मिलित हुए।

मुख्य अतिथि माननीय श्री विजय कुमार चौधरी, अध्यक्ष, बिहार विधान सभा ने महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के कार्यो एवं सिद्धान्तों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए सामाजिक कुरीतियों, अंधविश्वासों एवं पाखण्डों को दूर भगाकर सत्य पथ प्रशस्त करने के लिए आर्य समाज की भूमिका को सराहा तथा डी.ए.वी. संस्थाओं को इस प्रकार के शिविर आयोजन के लिए भूरि–भूरि प्रशंसा की। विशिष्ट अतिथि माननीय अवधेश नारायण सिंह पूर्व उपसभापति बिहार विधान परिषद ने डी.ए.वी. संस्थाओं को अपना परिवार बताते हुए ऐसे सुअवसर पर बुलाने के लिए आभार व्यक्त किया।

पाणिनि कन्या महाविद्यालय वाराणसी की उपाचार्या डा.प्रीतिविमर्शिनी, आचार्या संजीवनी पाण्डेय एवं पाँच वेदपाठी ब्रह्मचारिणीयाँ यज्ञवेदी पर ब्रह्मा के रूप में विद्यमान रहीं।

उपसभा प्रधान डा. यू. एस. प्रसाद ने चार दिवसीय चरित्र–निर्माण शिविर के औचित्य पर विस्तारपूर्वक अपने विचार रखे और विद्यार्थियो को शिक्षा के साथ–साथ सभ्य, सुशील, अनुशासित एवं चरित्रवान बनने के लिए प्रेरित किया।

डॉ. टी. पी. पति क्षेत्रीय निदेशक तथा श्री एस. के. झा, मंत्री, उपसभा ने शिविरार्थियो को सम्बोधित किया।

प्रातः कालीन नित्यक्रिया से निवृत होकर शिविरार्थी विद्यालय के खेल–परिसर में योगाभ्यास एवं व्यायाय के लिए प्रातः 6 बजे पहुँच जाते थे। तदुपरांत सभी शिविरार्थी अपने–अपने हवन कुण्डों पर बैठकर मुख्य यज्ञकुण्ड का अनुसरण करते हुए यज्ञ करते थे।

राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त आचार्य श्री धर्मबन्धु (गुजरात) के द्वारा वेद एवं सांसारिक विषयों की तुलनात्मक वैज्ञानिक शोधपूर्ण व्याख्या शिविरार्थियों एवं शिक्षकों को अत्यधिक प्रभावित करती थी। प्रतियोगिता में सम्मिलित छात्र–छात्राओं को प्रमाण पत्र दिया गया तथा विजयी प्रतिभागियों को प्रमाण पत्र के साथ प्रेरक आकर्षक पुरस्कार क्षेत्रीय निदेशक, प्राचार्य एवं अतिथियों के द्वारा प्रदान किया गया।

समापन समारोह के मुख्य अतिथि के रूप में श्री एस के शर्मा मन्त्री आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली पधारे।

मुख्य अतिथि श्री एस के शर्मा ने सभा प्रधान श्री पूनम सूरी जी की भावनाओं को व्यक्त करते हुए प्रधान जी के यशस्वी परिवार की चर्चा की, जिसमें स्वयं महर्षि दयानन्द ने पधार कर संस्कारों की शिक्षा एवं दीक्षा दी है। आरणीय श्री शर्मा जी ने चरित्र निर्माण शिविर के सफल आयोजन के लिए डा. यू. एस. प्रसाद उपसभा प्रधान का विशेष सराहना की तथा संयोजक प्राचार्य श्री आर. राय की कार्य शैली की प्रशंसा की जिससे इतना बड़ा शिविर सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ है। शिविर में पधारे सभी विद्वत् मण्डल को शॉल एवं स्मृति चिह्न देकर सम्मानित किया गया।

डी.ए.वी. सैक्टर-49, गुरुग्राम में खसरा और रुबैला टीकाकरण अभियान

'वर्ल्डहेल्थ ऑर्गेनाइज़ेशन' (WHO) ने भारत के साथ–साथ अन्य दस देशों को खसरा और रूबैला जैसी खतरनाक बीमारियों से मुक्त कराने के लिए एक मुहीम चलाई है, जिसके अंतर्गत 9 महीने से लेकर 15 साल तक के बच्चे को एम.आर. का टीका लगाया जाएगा। इसी राष्ट्रव्यापी अभियान को सफल बनाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान देते हुए 'डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, सेक्टर–49, गुरुग्राम' में 15 वर्ष से कम उम्र के सभी विद्यार्थियों को एम.आर. का टीका लगाने की व्यवस्था की गई। इस टीकाकरण के बारे में अभिभावकों को भी सूचित किया गया। उन्हें इस बात का विश्वास दिलाया गया कि यह टीकाकरण बच्चों के लिए आवश्यक है और सुरक्षित भी तथा उनकी स्वीकृति के बाद ही विद्यार्थियों को टीका लगाया गया। इस अभियान के अंतर्गत विद्यालय के लगभग 90 प्रतिशत विद्यार्थियों ने टीके लगवाए।

इस आयोजन में शामिल होने के लिए गुरुग्राम के सी.एम.ओ. डॉ. बी.के. राजौरा (सिविल सर्जन), डॉ. नीलम थापर (यूनिसेफ), डॉ. मीनाक्षी रघुवंशी (डिप्टी सिविल सर्जन), डॉ. एम.पी. सिंह (डी.आई.ओ.), कुलदीप यादव तथा इस पूरे कार्यक्रम की संचालक डॉ. हरदीप कौर उपस्थित थीं। विद्यालय की डॉक्टर मीनाक्षी मिश्री ने भी अपना पूर्ण योगदान दिया।

विद्यालय की प्रधानाचार्या श्रीमती चारू मैनी के नेतृत्व में आयोजित इस कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए सभी विद्यार्थियों में 'हेल्थ बुलेटिन' बँटवाए गए और उन्हें इस विषय के प्रति और जागरुक करने के लिए वीडियो भी दिखाई गई। इस कार्यक्रम के आयोजन को लेकर अभिभावकों की प्रतिक्रिया बहुत अच्छी रही। विद्यार्थियों के स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए विद्यालय द्वारा उठाए गए इस कदम को लेकर वे काफी प्रसन्न और उत्साहित नज़र आए।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. ९

संपादक – पूनम सूरी

ओ३म्

आर्य जगत्

सप्ताह रविवार, 27 मई 2018 से 02 जून 2018

हे सोम! हृदय–कलश में प्रवेश करो

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

पवस्य सोम देववीतये वृषा, इन्द्रस्य हार्दि सोमधानमाविश।
पुरा नो बाधाद् दुरिताति पारय, क्षेत्रविद्धि दिश आहा विपृच्छते।।

ऋग् ९.७०.९

ऋषिः **रेणुः वैश्वामित्रः**। देवता **पवमानः सोमः**। छन्दः **जगती**।

● **(सोम)** हे सोम परमात्मन्! **(तू)**, **(वृषा)** वर्षक **(होता हुआ)**, **(देववीतये)** दिव्य गुणों की प्राप्ति के लिए, **(पवस्य)** प्रवाहित हो, **(इन्द्रस्य)** आत्मा के, **(हार्दि)** हृदय–रूप, **(सोमधानं)** सोम–कलश में, **(आविश)** प्रविष्ट हो।, **(बाधात्)** बाधे जाने से, **(पुरा)** पहले, **(नः)** हमें, **(दुरिता अति)** पापचरणों से लंघाकर, **(पारय)** पार करदे। **(क्षेत्रवित्)** मार्ग का ज्ञाता, **(विपृच्छते)** विशेषरूप से पूछनेवाले के लिए, **(दिशः)** दिशाओं को, **(आह हि)** बताता ही है।

● हे रसागर सोम परमात्मन्! तुम 'वृषा' हो, रस की वर्षा करनेवाले हो। तुम दिव्य गुणों के रस के साथ मेरे अन्दर प्रवाहित होवो। तुम आत्मा के हृदय–रूप सोम–कलश में आकर प्रविष्ट होवो। मेरा आत्मा न जाने कब से सोम–पान के लिए उत्कंठित हो रहा है, उस प्यासे की तृषा को दूर करो। तुम कामवर्षी हो, मेरी कामना को पूर्ण करो। तुम आनन्दवर्षी हो, मुझपर आनन्द की वर्षा करो।

कभी–कभी मेरा आत्मा 'दुरितों' से घिर जाता है। पाप–भावनाएँ उसे आगे बढ़ने से रोकती हैं। पाप–कर्म उसे निगलने के लिए तैयार रहते हैं। आसपास का पापमय वातावरण उसे पाप–मार्ग पर चलने के लिए प्रलोभित करता है। ऐसे समय में हे मेरे सोम प्रभु! क्या तुम खड़े देखते ही रहोगे? क्या तुम मुझे 'दुरितों' से ग्रसा जाने दोगे? क्या तुम मुझे पाप–ताप के प्रहारों से छलनी हो जाने दोगे? क्या तुम मुझे दुराचार–रूप शत्रुओं से आक्रान्त हो जाने दोगे? नहीं, तुम मेरे उद्धारक होकर आओ। इससे पहले कि 'दुरित' मेरे आत्मा पर प्रभुत्व पायें, उसे पतनोन्मुख करें, तुम त्वरित गति से मेरे पास आ जाओ और मुझे उन दुरितों से लंघाकर पार कर दो। संसार का यह नियम है कि जो 'क्षेत्रवित्' है, मार्ग का ज्ञाता है, वह पूछनेवाले को दिशा बताता ही है। तुमसे बढ़कर 'क्षेत्रवित्' बढ़कर मार्गज्ञ अन्य कौन है! अतः हे मेरे सोम प्रभु! मैं तो तुम्हीं से दिशा पूछता हूँ। मैं दिग्भ्रान्त हो रहा हूँ, तुम कुतुबनुमा यन्त्र की सुई बनकर मुझे दिशा दर्शाओ। यदि तुमसे दिशा–ज्ञान न मिला, तो मेरा जीवन–पोत भव–सागर में डूबकर नष्ट–भ्रष्ट हो जायेगा। हे प्रभु! मुझ भूले को सही राह दिखाओ, मुझ भटके को गन्तव्य लक्ष्य पर पहुँचाओ।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

बोध कथाएँ

● महात्मा आनन्द स्वामी

स्वामी जी ने कहा सच्चा भक्त व्यापार नहीं करता। 'वरेण्यम्' कहकर अपने आपको ईश्वर को अपर्ण कर देता है। मेघा से ऋतम्भरा तक पहुंचने के बारे में उन्होंने कहा पूर्ण श्रद्धा, अटल विश्वास और सच्चे ज्ञान के साथ ईश्वर–भक्ति और उस ईश्वर–भक्ति का सबसे सीधा, सबसे सरल और सबसे महान् मार्ग–दर्शक 'ओ३म्' है। 'अनन्य भक्ति से ही प्रभु कृपा' के संदर्भ में कहा जब प्रभु–कृपा होती है– ईश के साथ सच्ची रति (प्रेम) होने से। इसी को भगवान् के प्रति 'अनन्य भक्ति' कहते हैं।

–आगे पढ़ेंगे तीन लघु कथाएँ

भगवान् की सच्ची प्रार्थना

रूस के प्रसिद्ध साहित्यकार श्री तॉल्स्तॉय ने एक कहानी लिखी है। एक थे पादरी महोदय, बहुत बड़े धर्म–प्रचारक। स्थान–स्थान पर जाकर लोगों को ईसा महोदय का उपदेश देते। वह प्रार्थना सिखाते, जो बाइबिल में लिखी है। लोगों को कहते– "यह प्रार्थना करो, तभी तुम्हारा कल्याण होगा।" देशों से बाहर, दूसरे देशों में भी वे जहाज में बैठकर गए। जहाज् चल रहा था। उन्होंने सागर में एक छोटा–सा द्वीप देखा। सोचा– 'शायद वहाँ भी कोई व्यक्ति हो। चलो, उसके पास चलें। उसे ईश्वर–प्रार्थना करने का मार्ग बताएँ।' द्वीप में उतर गए अपने साथियों समेत। इधर–उधर देखा, परन्तु कोई दिखाई नहीं दिया। तभी द्वीप के दूसरी ओर से तीन बूढ़े आते दिखाई दिए। पादरी महोदय रुक गए। बूढ़े निकट आए तो पादरी ने देखा– उनकी दाढ़ियाँ सफ़ेद हैं, सिर के बाल भी सफ़ेद हैं। वृक्षों की छाल से उन्होंने अपने शरीर ढाँप रखे हैं। कोई भी वस्तु उनके पास नहीं। पादरी ने पूछा– "यहाँ कोई ग्राम अथवा नगर नहीं है?"

एक वृद्ध ने कहा– "नहीं, इस द्वीप में हम तीनों रहते हैं। चौथा कोई नहीं। फल हैं, वे खा लेते हैं। पानी है, वह पी लेते हैं। कभी कोई भूला–भटका इधर आ जाए तो उसे भी फल और पानी दे देते हैं।"

पादरी ने कहा– "यही करते हो? अरे अभागो! उस ईश्वर को याद करो, जिसने तुम्हें उत्पन्न किया है।"

दूसरे वृद्ध ने कहा– "उसे तो हम स्मरण करते ही हैं। उसे स्मरण करने के अतिरिक्त और कोई काम हमें है नहीं।"

पादरी ने पूछा– "किस प्रकार स्मरण करते हो?"

तीसरे वृद्ध ने कहा– "हम तीनों बैठ जाते हैं। ऊपर देखते हैं। हाथ उठाकर कहते हैं– हम तीन हैं। तुम तीन हो। हमारी रक्षा करो!"

पादरी ने कहा– "यह क्या मूर्खों की–सी प्रार्थना है? तुम लोग बूढ़े हो गए हो। सारा जीवन तुमने नष्ट कर दिया है। बैठो, मैं तुम्हें वास्तविक प्रार्थना सिखाता हूँ।

और पर्याप्त समय लगाकर पर्याप्त प्रयत्न करने के पश्चात् उसने बाइबिल में लिखी हुई प्रार्थना उन्हें सिखाई, उनसे सुनी, और जब तसल्ली हो गई कि वे ठीक प्रकार से सीख गए हैं, तो अपने जहाज़ में बैठकर चल दिए। खुले समुद्र में पहुँचे। एक दिन व्यतीत हो गया। दूसरे दिन प्रातः जहाज़ पर खड़े एक व्यक्ति ने पीछे की ओर देखकर कहा– "दूर वह काला–सा धब्बा क्या है?"

पादरी ने पीछे की ओर देखा; बोला– "कुछ है तो सही जैसे कोई द्वीप हो, परन्तु इधर से तो हम आए हैं। इधर तो कोई द्वीप था नहीं। उन बूढ़ों वाला द्वीप बहुत पीछे रह गया है।"

तभी उस व्यक्ति ने कहा– "पादरी जी! एक नहीं, तीन धब्बे हैं और वे और बड़े हुए जाते हैं।"

पादरी ने भी देखा; बोले– "सचमुच ए वो तीन हैं और बड़े होते जाते हैं, जैसे हमारे समीप आ रहे हों।"

उस व्यक्ति ने कहा– "परन्तु हम तो परे जा रहे हैं।"

तभी पादरी ने ध्यान से देखते हुए कहा– "अरे! यह द्वीप नहीं, समुद्री पशु होते हैं। बढ़े चले आ रहे हैं।"

कुछ ही देर में जहाज़वालों ने देखा कि वे पशु नहीं है, वे ही तीन वृद्ध हैं, जिन्हें एक दिन पूर्व उस द्वीप में प्रार्थना सिखाकर आए थे। इस समय तीनों पानी पर दौड़े चले आ रहे थे। हाथ उठाकर आवाज़ भी दे रहे थे। पादरी ने चिल्लाकर कहा– "जहाज़ रोको!"

जहाज़ रुका, परन्तु पादरी महोदय चकित थे कि ए लोग पानी पर कैसे दौड़ रहे हैं? डूबते क्यों नहीं?

उन तीनों बूढ़ों ने जहाज़ में आकर कहा– "पादरी महोदय! हम अनपढ़ व्यक्ति हैं। आप से प्रार्थना हमें सिखा आए थे, वह हम भूल गए। उसके शब्द ठीक प्रकार स्मरण नहीं आते। कृपा करके उन्हें फिर से सिखाइए।"

पादरी ने आश्चर्य से उनकी ओर देखा; बोले– "और तुम पानी पर दौड़े किस प्रकार?"

एक वृद्ध ने कहा– "यह तो साधारण बात है पादरी महोदय! हम भगवान् से बोले–

शेष पृष्ठ 04 पर ☞

जीवन विकास के स्वर्णिम सूत्र

आर्यसमाज के नियमों पर एक दृष्टि

● भद्रसेन

आज के इस वैज्ञानिक युग में विज्ञान के आविष्कारों के कारण जीवन अनेक सुख–सुविधाओं से पूर्ण हो गया है। इन भौतिक सुख–सुविधाओं को प्राप्त कर एक विवेकशील के मन में स्वाभाविक जिज्ञासा होती है, कि जैसे भौतिक क्षेत्र में एक से एक अद्भुत आविष्कार हैं, क्या कोई जीवन के सम्बंध में भी ऐसी अनोखी जीवन पद्धति है, जिससे मानव जीवन का प्रत्येक पहलू विकसित हो सके। क्या ही अच्छा हो कि जीवनकला का कोई ऐसा विज्ञान सदृश आविष्कार हो, जिसमें जीवन के सर्वांगपूर्ण विकास का जीवनपथ दर्शाया गया हो।

ऐसी स्वाभाविक जिज्ञासा वालों को मैं विश्वास से कहना चाहता हूँ कि हाँ विज्ञान के आविष्कारों की तरह प्रमाणित और जीवन के सर्वांगपूर्ण विकास को बताने वाला जीवन–पद्धति का एक ऐसा आविष्कार है। जीवन की वैज्ञानिक पद्धति का वह अद्भुत आविष्कार है– आर्यसमाज के दस नियम। आर्यसमाज का गत शताब्दी का गौरवपूर्ण इतिहास इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है क्योंकि इन नियमों में जीवन के सर्वांगपूर्ण विकास का एक सुनिश्चित पथ छिपा हुआ है। अतः आइए जीवन की इस वैज्ञानिक पद्धति पर एक दृष्टि डालें।

जीवन के सर्वांगपूर्ण विकास का प्रथम मूलमंत्र है। **आस्तिकता की भावना,** जिस को युक्ति पूर्वक सम्पुष्ट करते हुए ही प्रथम नियम में कहा है–

"सब सत्य–विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं, उन सब का आदिमूल परमेश्वर है।" इस नियम में ईश्वर की सिद्धिकी एक ठोस युक्ति दी गई है और इसी युक्ति में ही अन्य सारी युक्तियाँ आ जाती हैं, जो कि विस्तारपूर्वक न्यायकुसुमाञ्जलि आदि ग्रंथों में वर्णित हैं।

इस नियम में कहा है, कि जिस संसार में हम रहते हैं, उसमें मुख्य रूप से दो पदार्थ हैं, जिनकी सत्ता को कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता। एक तो है– प्रतिक्षण हमारे व्यवहार में आने वाले जगत् के पदार्थ और दूसरा ज्ञान, जिसके द्वारा हम इन पदार्थों का उपयोग करते हैं। इसीलिए कहा है कि आज संसार में जितनी भी सत्यविद्याएँ हैं और उनसे ज्ञात होने वाले जितने भी पदार्थ हैं, उन दोनों का आदिमूल परमेश्वर है। इससे तो किसी का भी मतभेद नहीं हो सकता कि पदार्थ और पदार्थों सम्बंधी ज्ञान ये दोनों संसार में हैं। जब ये यहाँ हैं, तो किसी–न–किसी के द्वारा ही आए हैं? आर्यसमाज की मान्यता के अनुसार इन दोनों का आदिमूल परमेश्वर है और परमेश्वर इनका आदिमूल ही है, सब कुछ नहीं। अर्थात् प्रारंभ में ईश्वर ही मूलवस्तुओं का दाता, निर्माता और भावों का प्रेरक था। पुनः मनुष्यों के प्रयास से उनमें विकास और परिष्कार हुआ। अतः सब कुछ का निर्माता या सब कुछ ईश्वर नहीं है। ईश्वर सृष्टि और सृष्टि के मौलिक पदार्थों का निर्माता है। तदनन्तर मनुष्य अपने विवेक से ईश्वरनिर्मित पृथिवी, लौह आदि को अनेक रूप देते हैं।

पदार्थों से किसी को ज्ञान प्राप्त नहीं होता, क्योंकि वे जड़ हैं। तब वे किसी को कैसे ज्ञान दे सकते हैं? और न किसी पदार्थ को देखने मात्र से उसका ज्ञान हो सकता है। यदि ऐसा होता, तो सबको ही स्वयं ज्ञान हो जाता। मनुष्यों का प्रायः सारा ज्ञान नैमित्तिक है और ज्ञान का आदिनिमित्त ईश्वर ही है।

स पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्।

(योगसूत्र 1,26)

संसार के पदार्थों और ज्ञान का प्रादुर्भाव जहाँ ईश्वर की सत्ता को सिद्ध करता है, वहाँ संसार का नियामक, व्यवस्थापक भी ईश्वर ही है। यह स्वतः सिद्ध हो जाता है।

ईश्वर की सिद्धि के साथ यह स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि ईश्वर का स्वरूप क्या है? ईश्वर को मानने वाले सभी मतवादी यह स्वीकार करते हैं कि इस जगत् का कर्ता, व्यवस्थापक और संहारक ईश्वर ही है। अतः यह स्वतः सिद्ध हो गया कि ईश्वर का शुद्ध स्वरूप वही है, जो कि इन तीनों कार्यों को कर सके। ईश्वर के ऐसे शुद्ध स्वरूप का ही निर्देश करते हुए द्वितीय नियम में कहा है–

"ईश्वरसच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य पवित्र और सृष्टिकर्ता है, उसी की उपासना करनी योग्य है।"

ऐसे स्वरूप वाला ही बिना किसी अड़चन के जगत्–सम्बन्धी कार्यों को कर सकता है। इस नियम में युक्तिसंगत, बुद्धिगम्य ईश्वर का स्वरूप दर्शाया गया है, जो ईश्वर की अपेक्षा और कार्य के अनुरूप है। नियम के अन्तिम शब्दों में ऐसे स्वरूप वाले की ही उपासना का निर्देश है क्योंकि ऐसे स्वरूप वाले की उपासना से ही उपासना का अभीष्ट फल पाया जा सकता है।

जीवन की सर्वविध प्रगति के दूसरे मूलमन्त्र– **ज्ञान की** चर्चा तृतीय नियम में है, जिसमें बताया गया है कि ईश्वर ने जो ज्ञान दिया है– वह वेद है और वह सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। यह सीधी सी बात है कि जब वेद मानव–जाति के लिए दिया गया है, तो उसकी आवश्यकता के अनुसार उसमें सर्वविध सत्यज्ञान होना चाहिए। प्रत्येक ज्ञानाभिलाषी को ऐसे ग्रन्थ को पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना चाहिए। जिमसें मानव–जीवन के लिए उपयोगी सर्वविध सत्यज्ञान हो, वही ईश्वरीय ज्ञान कहलाने के योग्य है। ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका और अपने वेदभाष्य में महर्षि ने प्रमाणपूर्वक वेदों को सब सत्यविद्याओं का पुस्तक प्रतिपादित किया है।

ज्ञानप्राप्ति एवं प्रसार के ये चार हैं, प्राथमिक तथा मौलिक उपाय हैं। इसीलिए उनका यहाँ संकेत किया है। सबसे विशेष बात तो यह है कि इन चारों उपायों को यहाँ परमधर्म बताया गया है। जबकि कुछ की दृष्टि में अहिंसा, ब्रह्मचर्य या तप ही परमधर्म है। विचार किया जाए तो सिद्ध होता है कि अहिंसा, ब्रह्मचर्य और तप प्रत्येक स्थिति में हर व्यक्ति नहीं अपना सकता, क्योंकि अपराधी को यथायोग्य दण्ड देना न्यायाधीश का आवश्यक कर्त्तव्य है। अतः अहिंसा आदि हर स्थिति में हर एक के परमधर्म नहीं हो सकते। दूसरी बात यह है कि 'हाथी के पाँव में सब के पाँव' के अनुसार अहिंसा आदि सभी तत्त्वों का वेद में वर्णन है ही, क्योंकि वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक होने से व्यक्ति और समाज के लिए उपादेय सभी तत्त्वों का आगार है। इस नियम में ज्ञान की ओर संकेत किया गया है। **'विद्ययाऽमृतश्नुते'** (यजु.40,14) **ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः ज्ञानान्मुक्तिः** (सांख्य.), **'तत्त्वज्ञानान्निःश्रेयसम्'** इत्यादि वाक्यों से भी यही सिद्ध होता है कि ज्ञान ही परमधर्म है। हर प्रगति का मुख्य आधार होने से ही भारतीय साहित्य में पग–पग पर ज्ञान और ज्ञान वाले की इतनी अधिक महिमा भरी पड़ी है।

जीवनविकास का सब से आवश्यक मूलमन्त्र दर्शाते हुए चतुर्थ नियम में कहा है– **"सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।"** संसार का इतिहास इस बात का साक्षी है कि संसार को दुःख, कष्ट, क्लेश देने वाली चीजों में युद्ध, विवाद का प्रथम स्थान है। हर प्रकार के युद्ध का एकमात्र कारण यही होता है कि दोनों पक्ष या कोई एक पक्ष सत्य के ग्रहण और असत्य के त्याग के लिए तैयार नहीं होते या होता। अतएव इन दुःखों, क्लेशों, कष्टों और उनके कारणों से बचने के लिए ही चतुर्थ नियम में संकेत किया गया है।

आज जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विज्ञान ने अनेक सुविधाएँ, उपलब्धियाँ, सफलताएँ उपस्थित कर दी हैं। विज्ञान की इस पद्धति के पीछे एक तथ्य, आधार मिलता है कि परीक्षण, विचार करते हुए उस विषय के सम्बन्ध में जो असत्य निकले, उसको सहर्ष छोड़ कर उस विषय में जो सत्य, तथ्य सामने आए उसको ग्रहण करने में निःसंकोच उद्यत हों। वस्तुतः यही विज्ञान की सीख है अर्थात् सारा विज्ञान और अन्वेषण इसी कसौटी पर ही टिके हुए हैं।

मानव–जीनव के प्रत्येक क्षेत्र की प्रगति, विकास का यही मूलमन्त्र है कि जब भी हमें पता चले कि यह सत्य है और यह असत्य है तो हर प्रकार का हठ, दुराग्रह, पक्षपात छाड़ कर असत्य का त्याग और सत्य का ग्रहण करें क्योंकि प्रत्येक क्षेत्र और कार्य में सफलता उस विषय की सच्चाई को लेने से ही हो सकती है। हम सबका प्रतिदिन का यह अनुभव है कि हमारा हर कार्य उस क्षेत्र की सच्चाई को ग्रहण करने से ही सफल होता है। इसीलिए ही हर व्यक्ति अपने साथ दूसरों से सत्य–व्यवहार की आशा करता है क्योंकि सत्य के अपनाने से ही उसका हर कार्य पूरा होता है।

सारा का सारा मानवसमाज आपस के व्यवहार पर टिका हुआ है। परस्पर के व्यवहार का आधार विश्वास है और विश्वास वहीं पर होता है या टिकता है जहाँ सत्य होता है। अतः यदि हम चाहते हैं कि हमारा व्यवहार ठीक चले, तो व्यवहार के आधारभूत विश्वास को चिरस्थायी बनाने के लिए "सत्य के ग्रहण और असत्य को छोड़ने के लिए" हम सदा तैयार रहें। तभी हमारा जीवन सुखी एवं सुविधापूर्ण हो सकता है। मानव जीवन का एकमात्र उद्देश्य सत्य ही है, क्योंकि सत्य से ही जीवन–जीवन बनता है। इसीलिए ही सभी धर्मग्रन्थों ने एक स्वर से सत्य की प्रशंसा की है और धर्म का ही दूसरा नाम सत्य है।

इस नियम से यह भी स्पष्ट होता है, कि चाहे सत्य किसी का भी हो, उसको लेने के लिए सर्वदा उद्यत रहना चाहिए। इसमें अपने–पराए का कोई भेद नहीं।

पंचम नियम में संकेत किया है कि हम जो भी कार्य करें, वह चाहे किसी भी क्षेत्र का हो और उसका कोई भी पहलू हो, वह धर्मानुसार ही हो। ऐसी स्थिति में एक प्रश्न उठता है कि धर्म क्या है? क्योंकि 'जितने मुँह उतनी बातें', के अनुसार किसी की दृष्टि में कुछ धर्म है तो किसी के विचार में कुछ धर्म है। इसी गुत्थी को सरलता से हल करते हुए स्पष्ट शब्दों में कहा है– **"सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिएँ।"**

जिसका सीधा सा भाव यह है कि सत्य ही धर्म है और असत्य ही अधर्म है। वह भी विचार करके, क्योंकि कई बार कोई बात ऊपर से या एक पक्ष की दृष्टि से सत्य प्रतीत होती है, परन्तु सारी स्थिति का पता लगने पर एवं गहराई से देखने पर वही असत्य सिद्ध हो जाती है।

182 शालीमार नगर,
होशियारपुर 146001

त्यागी, तपस्वी, संन्यासी– महात्मा हंसराज

● डॉ. भवानी लाल भारतीय

महात्मा हंसराज की पहचान व्यक्ति, तपस्वी, समर्पित समाजसेवी, शिक्षा शास्त्री तथा वैदिक धर्म के प्रचार के लिए उत्सर्गीकृत व्यक्तित्व वाले–महापुरुष के रूप में होती है। परन्तु कितने को यह पता है कि स्वामी दयानन्द की वैदिक विचारधारा को आदर्श व्यवस्था के रूप में स्वीकार करने वाले हंसराज न केवल त्याग, तप तथा आनन्द धर्मानुराग के प्रतीक थे। वेदों के अध्ययन चिन्तन, तथा मनन में उनकी विशेष रुचि भी थी। अत्यधिक व्यस्त जीवन चर्या के रहते हुए भी वे वेदाध्ययन के लिए समय निकाल लेते थे। उनका यह वेद चिन्तन उनके द्वारा दिए गए प्रवचनों, व्याख्यानों तथा लेखन में यत्र तत्र स्फुट हुआ है।

1933 का वर्ष अजमेर में ऋषि दयानन्द के निर्वाण की अर्द्धशताब्दी मनाई जा रही थी। ध्यातव्य है कि तब के पचास वर्ष पूर्व 30 अक्टूबर 1883 को इसी अजमेर नगर में पुण्यश्लोक ऋषि दयानन्द ने परलोक प्रस्थान किया था। निर्वाण शताब्दी के इस अवसर पर चतुर्वेद पारायण यज्ञ किया गया था। पं. युधिष्ठिर मीमांसक इसमें वेदपाठी के रूप में सम्मिलित हुए थे। आर्य–संन्यासी पर्याप्त संख्या में उपस्थित थे। इन साधुओं की एक अनौपचारिक बैठक में चर्चा चली कि महात्मा पर्याप्त वृद्ध हो गए हैं इन्हें अब संन्यास ले लेना चाहिए। विचार हुआ कि हम आर्य संन्यासियों में मूर्धन्य स्वामी सर्वदानन्द जी से निवेदन करें कि वे महात्मा जी को संन्यासी बनने की प्रेरणा दें। यह संन्यासी समूह स्वामी सर्वदानन्द जी के समीप गया तथा उनसे महात्मा जी को चतुर्थ आश्रम में प्रविष्ट होने के लिए निवेदन करने के लिए कहा। स्वामी जी समझ गए और उन्होंने साधु मण्डल से कहा– **"आप लोग हंसराज जी के त्याग, तप और कर्मण्यता को नहीं जानते। उनकी साधना व सेवा वृत्ति अपूर्व है। वे सफेद वस्त्रों में संन्यासी हैं। उन्हें किसी अन्य भगवा वस्त्र पहनकर संन्यासी बनने की आवश्यकता नहीं है।"** साथ ही यह भी कहा कि वे महात्मा जी से कुछ उपदेश ग्रहण अवश्य करें।

निश्चय के अनुसार संन्यास मण्डली श्वेत वस्त्र मण्डित श्वेत श्मश्रु (दाढ़ी, मूँछ) धारी महात्माजी की सेवा में उपदेश हेतु प्रस्तुत हुई। म्हात्मा जी ने उन्हें सम्बोधित कर कहा। मैं पंजाब प्रान्त का हूँ जहाँ गुरु नानक के अनुयायी सिख लोग पर्याप्त हैं। ये पाँच ककार अनिवार्य रूप से धारण करते हैं। ये पाँच वस्तुएँ हैं जिनके नाम 'क' से आरम्भ होते हैं– केश, कंघा, कटार, कच्छ तथा कड़ा। निश्चय ही ए बाह्य पदार्थ हैं। हम आर्यों को चरित्र निर्माण तथा आवरण की वृद्धि के लिए पंचसकारों का व्रत लेना चाहिए। पुनः पंचसकारों का नामोल्लेख किया– 1. संध्या, 2. स्वाध्याय, 3. संस्कार, 4. सेवा, 5. सत्संग। इनका विस्तार करते हुए कहा–

संध्या– प्रतिदिन किए जाने वाले पंच महायज्ञों में ब्रह्मयज्ञ के अन्तर्गत संध्या तथा स्वाध्याय को ग्रहण किया जाता है। प्रत्येक आर्य के दिन का आरम्भ संध्योपासना से होना चाहिए। ऋषि दयानन्द प्रतिपादित संध्योपासना के प्रमुख अंग निम्न है– शिखाबंधन, – गायत्री मंत्रोच्चारण पूर्वक, आचमन, इन्द्रिय स्पर्श, मार्जन, प्राणायाम, अघमर्षण, मनसा परिक्रमा, उपस्थान, गायत्री जप, समर्पण वाक्य, नमस्कार मंत्र पूर्वक समाप्ति। आगे चलकर महात्मा नारायण स्वामी ने संध्याविधि की व्याख्या लिखी तो बताया कि अघमर्षण पर्यन्त क्रियाओं से संध्या करने वाला स्वयं की उन्नति करता है। इसमें शरीर शुद्धि, इन्द्रिय शुद्धि, प्राणों का व्यायाम तथा पाप नाशन आदि है। मनसा परिक्रमा का उद्देश्य यह बताना है कि अन्यों के प्रति हमारा व्यवहार द्वेष रहित होना चाहिए। उपस्थान प्रकरण तो परमात्मा के प्रति स्वयं को निवेदित करना है। जो व्यक्ति संध्या नहीं करता वह साधु (सत्पुरुषों) की मण्डली में रहने के योग्य नहीं है।

स्वाध्याय– संध्या के साथ स्वाध्याय का अनिवार्य सम्बन्ध है। स्वाध्याय के लिए ईश्वरीय ज्ञान वेद को सर्वोपरि स्थान दिया गया है। तत्पश्चात् उपनिषद् आदि अध्यात्म शास्त्र के आर्ष ग्रन्थ स्वाध्याय के लिए उपयोगी हैं। रामायण, महाभारत, भगवद् गीता, मनुस्मृति आदि ऋषियों के लिखें वे ग्रन्थ है जो आर्ष इतिहास तथा धर्म के ग्रन्थ हैं। नियमपूर्वक स्वाध्याय करने के अनेक लाभ हैं। ऋषि पतंजलि ने स्वाध्याय को पाँच नियमों के अन्तर्गत स्थान दिया है। योगदर्शन पर व्यास मुनि का भाष्य है। इसमें स्वाध्याय का फल बताते हुए कहा है कि स्वाध्याय से परमात्मा का प्रकाश (ज्ञान) होता है। योगदर्शन के विभूति पाद में स्वाध्याय का फल **'इष्ट देवता संप्रयोग'** बताया गया है जिसका अर्थ है– **अपने लक्ष्य को प्राप्त करना।** यह स्वाध्याय से ही सम्भव है।

संस्कार– संस्कारों का तीसरा स्थान है। ऋषियों ने मानव जीवन के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, पारिवारिक तथा सामाजिक विकास के लिए गर्भाधान से लेकर अन्त्एष्टि पर्यन्त सोलह संस्कारों के क्रियान्वयन को अनिवार्य माना था। तदनुसार, आश्वलायन, पाराशर, गोभिल आदि सूत्रकारों ने विभिन्न गृह्य सूत्रों की रचना कर संस्कारों के महत्त्व तथा विधियों का लेखन किया था। समयान्तर में इन आर्ष विधियों के साथ–साथ अनेक अनार्ष विधियों का समावेश संस्कार कृत्यों में होने लगा– यथा, गणेश पूजा, नवग्रह पूजा, यज्ञों में मांसादि की आहुतियाँ आदि। ऋषि दयानन्द ने परिष्कार पूर्वक सोलह संस्कारों की विधि लिखी जो सर्वथा आचरण योग्य है।

सेवा– महात्मा हंसराज प्रतिपादित सेवा कर्म चौथा सकार है। उनका कहना था कि शिक्षा प्रचार, नारी शिक्षण, रोगियों की सेवा उपचार आदि कार्य अवश्य करणीय हैं। भारत में ईसाई प्रचारकों के आगमन के साथ ही ये सेवा प्रकल्प आरम्भ किए गए परन्तु मिश्नरियों के सेवा कार्य में धर्मपरिवर्तन का गोपनीय लक्ष्य छिपा था। आर्य समाज ने दैवी आपद विपद – अकाल, दुर्भिक्ष आदि में निस्काम सेवा की जिसका अभीष्ट लाभ लोगों को मिला। अन्तिम सकार – **सत्संग** – इसे महात्मा जी ने जाति संगठन का मुख्य आधार बताया। वैयक्तिक उपासना के साथ–साथ समाज मंदिरों में साप्ताहिक सत्संगों में जाना सामाजिक संगठन के लिए लाभप्रद है। ईसाइयों ने प्रचारित किया कि आर्य समाज के सत्संग ईसाइयों की नकल है। उनका आक्षेप था कि हिन्दू धर्म में सामूहिक उपासना के लिए कोई जगह नहीं थी, न है। ऋषि दयानन्द ने इसका प्रबल खण्डन इतिहास के उदाहरण देकर किया। इतिहास ग्रन्थों तथा पुराणों में भी अनेकत्र नैमिषारण्य जैसे जंगलों में अठ्ठासी हजार ऋषियों के धर्म चर्चा के लिए एकत्र होने की चर्चा है। उपनिषदों में राजा जनक जैसे राजर्षियों द्वारा आहूत उन दर्शन गोष्ठियों का उल्लेख मिलता है जिसमें गार्गी आदि विदुषियों तथा याज्ञवल्क्य सदृश ऋषियों के उपस्थित होने तथा धर्म एवं दर्शन की गुत्थियों को सुलझाने के संकेत मिलते हैं। महात्मा हंसराज प्रतिपादित पाँच सकार सर्वदा, सर्वथा आचरणीय हैं।

3/5 शंकर कॉलोनी, श्रीगंगानगर
(राजस्थान) – 335001

☞ पृष्ठ 02 का शेष

बोध कथाएँ...

हमें पादरी के पास जाना है। नौका हमारे पास है नहीं। दौड़ हम लेंगे। तुम कृपा करो कि हम दौड़ते चले जाएँ, पानी में डूब न जाएँ, और हम चल पड़े!"

पादरी ने हाथ जोड़ दिए; उनके सामने सिर झुकाकर धीरे से बोला– "महात्मा लोगों, तुम वापस जाओ। वही प्रार्थना करो, जो पहले किया करते थे। ईश्वर तुम्हारे हृदय की आवाज़ सुनता है। उसे शब्दों की आवश्यकता नहीं।"

यह एक काल्पनिक कहानी है। लेखक महोदय इस कथा से यह बताना चाहते हैं कि आनन्द सिंधु, करुणा का सागर भगवान् हृदय के प्यार को देखता है। आपके हृदय में उसके लिए प्यार है तो वह मिलेगा अवश्य।

तुलसी अपने राम को, हीज भजो या खीज।
भूमि पड़े उपजेंगे ही, उलटे सीधे बीज।।

प्रभु–भजन में तन्मयता

अकबर बादशाह दिन–भर यात्रा करते हुए बाहर दूर निकल गए। चलते–चलते नमाज़ का समय हो गया। तब मार्ग में ही एक ओर नमाज़ का वस्त्र बिछाकर दो–ज़ानु हो गए। उधर एक नवयुवती अपने पतिदेव को खोजती आ रही थी। उसके पतिदेव प्रातः के गए घर नहीं लौटे थे। यह सच्ची देवी पति–वियोग में उन्मत्त इधर–उधर दृष्टि डालती जा रही थी– अपने विचार में निमग्न। उसने नमाज़ का कपड़ा देखा नहीं और उसी के ऊपर पग रखती आगे बढ़ती गई। अकबर को उसकी गुस्ताख़ी पर क्रोध तो आया, परन्तु चुप साधे रखी। थोड़ी ही देर में जब वह युवती अपने पतिदेव के पास लौटी तो अकबर कहने लगा– "तुझे दिखा नहीं मैं नमाज़ में प्रभु–भक्ति में था? तुझे जाए–नमाज़ भी नज़र नहीं पड़ा? पग रखती चली गई?"

युवती ने बड़े धैर्य से एक दोहा पढ़ा–
नर–रानी सूझी नहीं, तुम कस लख्यो सुजान?
कुरान पढ़त बौरे भए, नहि राच्यो रहमान।।

"मैं तो अपने पतिदेव की खोज में गुम हो चुकी थी, जिससे मुझे कुछ सूझा नहीं, परन्तु तुम तो प्रभु–भजन में लीन थे, तुमने मुझे कैसे देख लिया? मालूम होता है कि कुरान ही पढ़–पढ़ बौरा गए हो, भगवान् में अभी प्रीति नहीं हुई।"

अकबर यह उत्तर सुनकर अवाक् रह गया और बतलाया जाता है कि वह अक्सर लम्बा श्वास लेकर यही दोहा बार–बार दोहराया करता था।

माँगना है जो कुछ खुदा से माँग

बादशाह अकबर एक दिन जंगल में आखेट कर रहे थे। भटककर रास्ता भूल गए। देर हो गई तो प्यास और भूख सताने लगी। ऐसा प्रतीत हुआ, जैसे प्राण होठों पर आ गए हों। तभी एक खेत देखा उन्होंने। उसके किनारे पर एक किसान खड़ा था। किसी के पास आकर बोले– "तुम्हारे पास कुछ खाने को है?"

किसान ने कहा– "क्यों नहीं, आओ बैठो।"

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

दो धाराएँ

● यश वर्मा

ओ३म् यस्मादृते न सिध्यति यज्ञो विपश्चितश्चन। स धीनां योगमिन्वति।।

यह ऋग्वेद का मन्त्र है जिसका अर्थ है:– जिस प्रकाशक प्रभु के बिना बड़े–बड़े बुद्धिमान का भी यज्ञ सिद्ध नहीं होता वह प्रभु बुद्धियों के योग में व्याप्त हो जाता है अर्थात् प्रभु के बुद्धियोग से ही सफ़लता प्राप्त होती है।

हम लोग प्रायः अपनी बुद्धि का अभिमान करते हैं। हमारा कोई भी काम हो, हम यही कहते हैं, मैंने कर दिया। परन्तु सफ़लता मिलती है प्रभु के बुद्धि योग से। प्रभु ने ही तो हमें बुद्धि दी है और समय–समय पर उस बुद्धि में प्रेरणा भी देता रहता है। कई बार हमें थोड़े से परिश्रम से बहुत बड़ी सफलता मिल जाती है, वो कैसे, वह प्रभु के बुद्धियोग से ही होता है। हमें अपनी बुद्धि प्रभु के अनुकूल बनानी चाहिए, उससे अपनी बुद्धि मिलानी चाहिए। जो भी इस संसार में हो रहा है वह प्रभु के बुद्धिबल, योगबल से हो रहा है। प्रभु सत्यमय है इसलिए हम भी सत्य और न्याय के अनुकूल रहें। यदि हम प्रभु के गुण सत्य, न्याय, दया, निर्विकारिता आदि को अपनाते हैं तो हमारा प्रभु से बुद्धियोग है। हम जो भी कर्म करें अपने जीवन में, प्रभु से बुद्धि जोड़कर, नम्र होकर, अहंकार रहित होकर करें ताकि हमारा जीवन एक पके हुए फल के समान हो। पके फल में 4 गुण होते हैं। नरम (नम्र), मिठास, गन्ध और रंग। ये गुण आएँगे हमारे अन्दर बुद्धियोग से। बस हमें थोड़ा सा विचार करना होगा कि हमें भोगवाद में जीना है या योगवाद में। योगवाद अपनाते हैं तभी तो प्रभु से बुद्धियोग होता है।

मानव जीवन दो धाराओं में बँटा हुआ है। एक है **भोगवाद** और दूसरा है **योगवाद**। आज सारा देश भोगवाद में फँसा हुआ है। हमारा भारत देश तो अब कुछ वर्षों से इस ओर अधिक झुका है लेकिन दूसरे देश अमेरिका, रूस, ब्रिटेन, जापान, जर्मनी आदि बहुत से देश तो न जाने कब से भोगवाद में फँसे हुए हैं। भोगवाद में क्या है कि सब कुछ मेरा हो जाए। सारा धन, सम्पत्ति जो भी इस संसार में है, वह मेरा हो जाए। चाहे वह व्यक्तिगत रूप में है या परिवार, जाति, गाँव, नगर, प्रदेश, राष्ट्र, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हो। सब यही चाहते हैं कि मेरे पास अधिक से अधिक हो। इसीलिए भाई–भाई, परिवार, समाज, प्रदेश और राष्ट्रों में लड़ाई झगड़े हो रहे हैं। सीमाओं पर लड़ाई, पानी के लिए प्रदेशों में लड़ाई, समुद्र के लिए राष्ट्रों में लड़ाई हो रही है। यहाँ तक कि अंतरिक्ष के लिए भी लड़ाई प्रारम्भ हो चुकी है। यह सब भोगवाद का परिणाम है। इससे आती है अशांति–मारकाट–युद्ध–जातिवाद–दुराचार–व्यभिचार–भ्रष्टाचार। महाभारत का युद्ध हो चाहे विश्वयुद्ध हुए, भोगवाद के कारण ही तो हुए हैं। अच्छा सोचिए, भ्रष्टाचार क्यों होता है? इसलिए कि दूसरे का धन मेरा हो जाए और मैं इससे भोग के साधन एकत्र कर सकूँ। अरे मानव! जो पाँच विषय हैं उनका भोग तो पशु भी करते हैं। प्रभु ने पाँचों विषय मनुष्य में दिए और पशु, पक्षी, कीट पतंगों आदि में भी दिए। यदि ये विषय ही हमारे जीवन का उद्देश्य बने रहे तो पशु पक्षी ओर मनुष्य में अन्तर ही क्या रहा। *जबकि उनकी अपेक्षा मनुष्य को प्रभु ने* विचारशील बुद्धि और विचार व्यक्त करने के लिए वाणी दी है। इसलिए मनुष्य का कर्त्तव्य बनता है कि वह विचार करे कि मैं अपने जीवन को किस प्रकार व्यतीत कर रहा हूँ। क्या यही मेरे जीवन का लक्ष्य है या इसके अलावा कुछ और भी है जिसको पाकर मैं अशांति दूर कर सकता हूँ।

भोगवाद के ठीक विपरीत है योगवाद। योगवाद का एक आधार स्तम्भ है **'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा'** अर्थात् त्याग भाव से भोगो। इसका अर्थ प्रायः हम लोगों ने यह निकाल लिया कि सब कुछ त्याग दो। जबकि वेद कहता है कि खूब धन कम ओ, सोने के बर्तनों में भोजन करो। इन दोनों बातों का सही अर्थ यही है कि धर्मपूर्वक खूब धन कमाओ और फिर त्याग पूर्वक भोगो अर्थात् मिलकर बाँटकर खाओ। मज़दूर को, अपने कर्मचारी को उनका पूरा मेहनताना दो। प्राईवेट हस्पताल का डॉक्टर, स्कूल का मालिक, किसी भी संस्थान का मालिक/प्रबंन्धक, सरकार अपने कर्मचारियों को पूरा मेहनताना दें। धार्मिक/चैरिटेबल/सेवा कार्य करने वाली संस्थाओं को अवश्य दें। अपने पास उतना रखें जितनी आवश्यकता हो शेष समाज व राष्ट्र हित में लगाएँ। यह है त्याग भाव से भोगना। और इसके साथ ही प्रभु उपासना को अपने जीवन का अंग बनाना है। संध्या, प्रार्थना, उपासना, सत्संग, स्वाध्याय हमारे जीवन में आ जाएँ। हमारा जीवन यज्ञमय हो जाए जैसे प्रभु का यज्ञ हर समय चल रहा है। फिर देखो आप कैसे कर्मयोगी, ध्यान योगी, राजयोगी बनते हो। आपके जीवन में सुख, शांति, पवित्रता, न्यायकारिता दयालुता का वास होगा। संसार में रहते हुए आपके पास ऐश्वर्य व श्री अर्थात् यश की कमी न रहेगी।

भोगवाद का अर्थ प्रायः हमने यही मान लिया कि घरबार छोड़कर जंगल अथवा किसी आश्रम में बैठकर, केवल प्रभु का ध्यान करना है। क्या ऐसे यह संसार चल पाएगा। नहीं, कभी नहीं। प्रभु ने मानव को बनाया है पिछले कर्म भोगने के लिए अर्थात भोग के लिए और नए कर्म करने के लिए। नए कर्म ऐसे भी हो सकते हैं जो हमें मुक्ति तक भी ले जा सकते हैं। अतः यह मानव शरीर भोग व मोक्ष दोनों के लिए मिला है। भोगवाद में तो हम पूर्णतया फँसे हुए हैं इसलिए हम भोगवाद को कम करते हुए योगवाद की ओर बढ़ें। योग का सही स्वरूप समझें। एक पंछी को उड़ने के लिए दो डैनों (पंखों) की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार हमें भी भोगवाद व योगवाद दोनों में समन्वय बना कर चलना होगा। इसी में जीवन की सच्ची सफ़लता है। वैसे तो बहुत सूत्र हैं सफ़लता के। लेकिन यहाँ कुछ सूत्रों का विवरण इस प्रकार है:–

1. पूर्व जन्म के उपार्जित संस्कार

पूर्व जन्म के संस्कारों के कारण ही कुछ व्यक्तियों ने 5 वर्ष, 10 वर्ष, 12 वर्ष, 18 वर्ष की अल्पायु में ही घर छोड़ दिए और वे प्रभु की खोज में चल दिए। वे हमारे मार्ग दर्शक बन गए। महर्षि दयानन्द, बुद्ध, नानक, महावीर, स्वामी विवेकानन्द आदि कितने ही महापुरुष उदाहरण रूप में हमारे सामने हैं।

2. तीव्र इच्छा

किसी भी कार्य में सफल होने के लिए तीव्र इच्छा का बहुत महत्व है। इससे जीवन में संकल्प आता है और जीवन नियमबद्ध हो जाता है।

3. पर्याप्त साधनों की उपलब्धि

प्रारब्ध से अच्छे माता–पिता मिल जाना सबसे प्रथम व उत्तम साधन है उपलब्धि का।

प्रायः ऐसा देखा जाता है कि जैसे माता–पिता हैं वैसी ही सन्तान है। दूसरा है अच्छा गुरु मिल जाना। शिक्षा तो आजकल ऐसी मिल रही है वह तो हम सब देख ही रहे हैं। शिक्षक/गुरु/आचार्य ऐसा हो जो स्वयं में एक उदाहरण हो, आचरण करने योग्य हो। आज तो ऐसे गुरु हैं जो लाखों की संख्या में शिष्य बनाए बैठे हैं परन्तु लोगों को अन्धकार में, पाप–पाखण्ड में धकेल रहे हैं। पढ़े लिखे लोग भी बिना समझे ऐसे गुरुओं के पीछे लग जाते हैं। सत्य ज्ञान को पा ही नहीं रहे।

4. कार्य करने की सही विधि

कार्य करने की विधि सही हो तो लक्ष्य तक सफ़तापूर्वक पहुँचा जा सकता है। 4 व्यक्तियों के पास दूध, चावल, चीनी, अग्नि, बर्तन, सब कुछ है परन्तु किसी एक व्यक्ति की खीर सबसे स्वादिष्ट बनती है क्योंकि उसकी विधि सही है। इस प्रकार योग साधना में भी सही विधि वाले को शीघ्र सफलता मिलती है।

5. पूर्ण पुरुषार्थ

पूर्ण पुरुषार्थ अर्थात् सौ प्रतिशत परिश्रम के पश्चात् ही पूर्ण सफलता मिलती है वरना जैसे किसी विद्यार्थी के 40 प्रतिशत अंक आते हैं और किसी के 90–95 प्रतिशत अंक आते हैं। वैसे ही हमारे जीवन में कोई भी कार्य हम करते हैं, जितना पुरुषार्थ हम करते हैं, उतनी ही सफलता मिलती है।

6. घोर तपस्या

अपने लक्ष्य की ओर विघ्न बाधाएँ आने पर भी सहनशीलता पूर्वक, धैर्य का परिचय देते हुए, अग्रसर होना ही घोर तपस्या है। घोर तपस्या से बड़े से बड़े कार्य में भी सफ़लता मिलती है।

7. वाणी

मधुर वाणी सफ़लता के लिए एक वरदान साबित होती है। परिवार, समाज और व्यवसाय में मधुर वाणी बहुत कारगर उपाय है सफ़लता का। कटु वाणी का घाव जीवन भर नहीं भरता। मधुर वाणी वाले से सब मिलना पसन्द करते हैं। वह लोकप्रिय बन जाता है।

हम समय की कद्र करते हुए धैर्य पूर्वक अपना जीवन व्यतीत करते हुए जिएँ तो हमारे जीवन में अवश्य सफ़लता आएगी। सबके पास 24 घंटे का समय परमात्मा ने दिया है। यह हमारे ऊपर निर्भर करता है कि हम समय का सदुपयोग करते हैं या दुरुपयोग। यज्ञ, सत्संग, स्वाध्याय, साधना, सेवा भी कर सकते और पिक्चर, टी.वी., अश्लील प्रोग्राम, क्लब, व्यभिचार भी कर सकते हैं। सफ़ल जीवन कौन सा है, यह विचार हमने करना है। हमने भोगवाद में ही जीते रहना है या साथ में योगवाद का समन्वित जीवन बिताना है ताकि हमारे दुख व दुख के कारण समाप्त हों और हमें सुख व सुख के साधन मिलें जो कि हमारे मानव जीवन का प्रयोजन है।

हम प्रभु से अपनी बुद्धि को मिलाएँ जैसे कि ऊपर मन्त्र में कहा गया है। प्रभु को समर्पित होकर सब काम करें। प्रभु का ध्यान साधना करते हुए प्रभु जाप का बाँस लगाएँ और शैतानी विचारों को दूर भगाएँ।

ओ३म् के ही ध्यान,
और ध्यान से ही योग तक,
जीवन के अन्तिम लक्ष्य तक,
यह ओ३म् ही पहुँचाएगा।

मन्त्री, आर्य समाज
माडल टाऊन, यमुनानगर
मो. 94164–46305

गतांक से आगे

नैतिकता की अवधारणा और शिक्षा में उसका उपयोग

● शिवनारायण उपाध्याय

अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्'। यजु. 40.10

हे प्रकाश स्वरूप परमात्मा। आप सम्पूर्ण ज्ञान के भण्डार हैं तथा प्राणियों को सुख देने वाले हैं। कृपा करके हमें विज्ञान और ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए धर्म युक्त आप्त पुरुषों के मार्ग से सम्पूर्ण प्रज्ञान और उत्तम कर्म प्राप्त कराइए। धर्म युक्त आप्त लोगों के मार्ग पर चलना ही नैतिकता है।

अग्ने व्रतपते व्रतं चारिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्।

इदमहमनृतात सत्यमुपैति।।

यजुर्वेद 1.51

हे अग्नि स्वरूप सम्पूर्ण व्रतों के स्वामी परमात्मा। मैं आज असत्य से भिन्न सत्य बोलना, सत्य मानना और सत्य ही करने का व्रत ले रहा हूँ। मेरे इस व्रत को सिद्ध करने के लिए आप मुझे शक्ति प्रदान करें। यह सत्य का पालन ही नैतिकता है।

अनुव्रत पितुः पुत्रो मात्राभवतु संमनाः। जाया पत्ये मधुमती वाचं वदतु शान्तिवाम्। अथर्व. 3.30.2 पुत्र पिता का अनुव्रती हो अर्थात् पिता जिन श्रेष्ठ कर्मों का आचरण करता रहा है वैसे ही श्रेष्ठ आचरण पुत्र भी अपने जीवन में धारण करे तथा उसके विचार अपनी माता के मन के अनुकूल होवें। पत्नी पति के साथ मधुर वाणी से संवाद करे और सदैव ऐसी वाणी बोले जिससे शान्ति का वातावरण बने। इस प्रकार कार्य करना ही नैतिकता कहलाता है।

जब यह शिक्षा में स्थान प्राप्त करेगा तभी सफलता प्राप्त होगी।

येन देवान वियन्ति नो च विद्विषते मिथः।

तत्कृण्मो ब्रह्म वो गृहे संज्ञानं पुरुषेभ्यः।। अथर्व. 3.30.4

हे गृहस्थो! मैं ईश्वर जिस प्रकार के व्यवहार से विद्वान लोग परस्पर पृथक् भाव वाले नहीं होते और परस्पर द्वेष कभी नहीं करते, वही कर्म तुम्हारे घर में निश्चित करता हूँ। पुरुषों को अच्छी प्रकार चिताता हूँ कि तुम लोग परस्पर प्रीति से वर्त कर धन और ऐश्वर्य को प्राप्त करो।

संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।

देवा भागं यथा पूर्वे संजानानाम् उपासते।। ऋ.10.191.2

प्रेम से मिलकर चलो बोलो सभी ज्ञानी बनो।

पूर्वजों की भाँति तुम कर्त्तव्यों के मानी बनो।

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः।

समानामस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति।। ऋ.10.191.4

हों सभी के दिल तथा संकल्प अविरोधी सदा।

मन भरें हों प्रेम से जिससे बढ़े सुख सम्पदा।।

स्योना भव श्वशुरेभ्य स्योना पत्ये गृहेभ्यः।

स्योना स्यै र्स्वस्यै विशे स्योना पुष्टायैषां भव।। अथर्व. 14.2.27

हे वधू! तू श्वसुरादि के लिए सुख प्रदाता बन। पति के लिए सुख प्रदाता बन और इस सब प्रजा के लिए सुख प्रदाता बन।

अब योग शास्त्र के आधार पर विचार करते हैं।

तत्राहिंसा सत्यास्तेय ब्रह्मचर्यापरिग्रहायमाः।। यो. 2.30

(अहिंसा) वैर त्याग **(सत्य)** मन, वचन और कर्म में एक रूपता सत्य ही सोचना, सत्य ही बोलना और सत्य ही करना, **(अस्तेय)** मन, वचन और कर्म से चोरी का त्याग अर्थात् किसी भी व्यक्ति की वस्तु को उसके स्वामी की आज्ञा बिना न लेना, **(ब्रह्मचर्य)** लगातार ब्रह्म चिन्तन एवं उपस्थेन्द्रिय पर नियन्त्रण **(अपरिग्रह)** स्वत्वाभिमान रहित होना तथा भौतिक पदार्थों के संग्रह से बचना। ये पाँच यम कहलाते हैं। इन्हें ही जैन धर्म में पाँच महाव्रत कहा जाता है।

शौच संतोष तपः स्वाध्यायेश्वर प्रणिधानानि नियमाः। यो 2.32

(शौच) शारीरिक, मानसिक और आत्मिक पवित्रता **(सन्तोष)** सम्यक् प्रसन्न होकर धर्म के मार्ग से पुरुषार्थ करके अर्थ उपार्जन करना और जो धन प्राप्त होवे उसी से सन्तुष्ट रहना **(तपः)** धर्म के मार्ग पर होने वाले कष्टों को सहज स्वीकार करना **(स्वाध्याय)** आर्ष ग्रन्थों का नित्य पठन–पाठन करना और **(ईश्वर प्रणिधान)** ईश्वर की भक्ति विशेष में आत्मा को लगाए रखना।

उपनिषदों में भी नैतिकता का विशद वर्णन हुआ है।

सत्यं वद। धर्म चर। स्वाध्यान्मा प्रमदः। तैति. 1.11.1

सदैव सत्य बोलो। सदैव धर्म का आचरण करो। स्वाध्याय में कभी भी प्रमाद मत करो।

देव पितृ कार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्। मातृदेवो भव। पितृदेवो भव आचार्य देवो भव अतिथि देवोभव। यान्यवधानि कर्मणि तानि त्वयोपास्यानि नो इतराणि।

तैति. 1.11.2

देव पितृ कार्यों में कभी प्रमाद मत करना। माता को देवी मानना। पिता को देवता मानना। आचार्य को देवता मानना। अतिथि को देवता मानना। हमारे जो श्रेष्ठ आचरण हैं उनका अनुगमन करना। दूसरों का अनुगमन मत करना।

ये के चास्मच्छ्रेयांसो ब्राह्मणाःतेषां त्वया ऽऽ सनेन प्रश्वसितव्यम्। श्रद्धया देयम्। अश्रद्धया देयम्। श्रियादेयम्। ह्रिया देयम्। भिया देयम्। संविदा देयम्।

तैति. 1.11.3

और जो कोई हमसे श्रेष्ठ अन्य ब्राह्मण हैं उनका तुमको आसन से सत्कार करना चाहिए। श्रद्धा से दान करना चाहिए। अश्रद्धा से भी दान करना चाहिए। प्रसन्नता से दान देना चाहिए। लज्जा से दान देना चाहिए। भय से भी दान देना चाहिए। प्रेमभाव से दान देना चाहिए।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने कहा है– **परहित सरिस धर्म नहीं भाई। पर पीड़ा सम नहीं अधमाई।**

अब शुक्रनीति पर विचार करते हैं।

सर्वलोकव्यवहारस्थितिर्नीत्या बिना न हि।

यथाऽशनैर्बिना देहस्थितिर्नस्याद्धि देहि नाम।। शुक्र. 1.11

जिस प्रकार भोजन के बिना शरीर की स्थिति नहीं हो सकती। उसी प्रकार नीति शास्त्र के बिना संपूर्ण लोक व्यवहार की स्थिति नहीं हो सकती है। संसार के संचालन की नीति को नीति शास्त्र के अतिरिक्त कोई भी नहीं बना सकता है।

विद्यायाश्च फलं ज्ञानं विनयस्य फलं श्रियः।

यज्ञदाने बल फलं सद्रक्षणमुराहृतम्।। शुक्र. 3.92

विद्या का फल ज्ञान, विनय का फल श्रेष्ठता, धन का फल यज्ञ और दान है। बल का फल सज्जनों की रक्षा करना है।

यत्र नार्य्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।

यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राऽफलाः क्रिया।। मनु. 3.56

जिस घर में स्त्रियों का मान होता है उस घर में विद्वान् लोग आनन्द से क्रीड़ा करते हैं परन्तु जिस घर में स्त्रियों का सम्मान नहीं होता है उस घर में सब क्रिया निष्फल हो जाती हैं। स्त्रियों का सम्मान करना नैतिकता है।

अभिवादनशीलस्य नित्यं वृद्धोससेविनः।

चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयुर्विद्या यशोबलम्।। मनु. 2.121

जो व्यक्ति नित्य ही वृद्धों का अभिवादन करता है उसकी आयु, विद्या, यश और बल बढ़ता है। मनु. स्मृति 2.199 में कहा गया है कि अपने आचार्य का सामान्य सम्बोधन में नाम न लें। इसी प्रकार मनुस्मृति 2.212 में कहा गया है कि युवती गुरु पत्नी का चरण स्पर्श न करके दूर से ही अभिवादन करें।

सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।

प्रियं च नानृतं ब्रूयादेष धर्मः सनातनः।।

मनु 4.138

सदा प्रिय और दूसरे का हितकारक बोले, अप्रिय सत्य न बोले, दूसरों को प्रसन्न करने के लिए असत्य भी न बोलें। यही सत्य सनातन धर्म है, यही नैतिकता है।

'धर्म सूत्रों में तो किस तरह उठें, बैठे, चलें, भोजनादि करें' का भी पर्याप्त वर्णन हुआ है। धर्म सूत्रों में प्राचीनतम धर्म सूत्र गोतम सूत्र है। उसी में से कुछ चिन्तन करते हैं।

आचार्य तत्पुत्र स्त्री दीक्षित नामानि। गो. धा.सू. 1.2.24

आचार्य, उनके पुत्र, उनकी पत्नी तथा दीक्षा लेने वालों के नाम का उच्चारण नहीं करना चाहिए।

शय्यासन स्थानानि विहाय प्रतिश्रवणम्।। गो.ध.सू.1.2.30

गुरु के कुछ पूछने पर शय्या, आसन और स्थान से उठ कर उत्तर देना चाहिए।

गच्छन्तं गुरुमनुगच्छेत्।।

गो.ध.सू.1.2.33

गुरु के चलने पर उनके पीछे–पीछे चले।

अनिचयो भिक्षुः।। गो.ध.सू.1.3.10

संन्यासी को संग्रह नहीं करना चाहिए।

पादोपसंग्रहणं समवायेऽन्वहम्।। गो.ध.सू.1.6.1 प्रतिदिन माता–पिता आदि के मिलने पर उनके चरण स्पर्श करने चाहिए।

सन्निपाते परस्य।। गो.ध.सू.1.6.4

माता–पिता आदि सभी श्रेष्ठजनों के एक साथ भेंट होने पर इनमें सबसे श्रेष्ठ व्यक्ति का चरण सर्वप्रथम स्पर्श करे।

श्रुतं तु सर्वेभ्यो गरीयः।। गो.ध.सू.1.6.19 वेद का ज्ञाता ही सर्व श्रेष्ठ होता है।

मैं समझता हूँ कि यदि शिक्षा में इन सबका समावेश न होवे तो शिक्षा अधूरी ही है। इतिशम्।

73 शास्त्री नगर, दादाबाड़ी,
कोटा। (राज.)

मानव जीवन–मानवता के पाँच लक्ष्य

● जीवन लाल आर्य

ओं तन्तुं तन्वन्रजसो भानुमन्विहि ज्योतिष्मतः पथोरक्षधिया कृतान्।
अनुल्वणं वयत जोगुवामपो मनुर्भव जनया दैव्यं जनम्।।

ऋ.20.53.6

हे मनुष्य! (**तन्तुम् तन्वम् रजसः**) ज्ञान के तन्तु को तनते हुए लोग के (**भानुम् अनुइहि**) = प्रकाशक सूर्य का अनुगमन कर। (धिया–कृता) = ज्ञान/ बुद्धि और कर्म से किए गए (**ज्योतिष्मतः पथः**) सभी प्रकाशयुक्त पथों / मार्गों की रक्षा कर। (**जोगुवाम अपः**) = उपासकों के कर्म को (**अनुल्वणम् वयत**) = निरन्तर कर, (मनुः भव) *मनुष्य बन* (**जनया दैव्यम् जनम्**) = और लोगों को दिव्य प्रभु का उपासक बना।

हम इस जगत् में चहुँ ओर नाना प्रकार के जीव जन्तु, पशु–पक्षी, कीट–पतंग आदि विचरण करते देख रहे हैं। ये सभी अपना–अपना जीवन जी रहे हैं। यह सब लीला प्राणी जगत् की है। इस प्राणी जगत् में मनुष्य भी आता है। वह भी इसी जगत् में अपना जीवन जी रहा है। वस्तुतः प्राणी जगत् को दो भागों में विभक्त करते हैं।

(क) **पशु–पक्षी आदि योनि**–इन सभी में 'स्वाभाविक गुण' हैं और ये सभी अपना–अपना कार्य निर्धारित समय पर पूरा करते हैं, और अपना जीवन भोग रहे हैं।

(ख) **मनुष्य योनि**– सर्वश्रेष्ठ योनि है इस प्राणी जगत् में जिसे प्रभु ने "नैमैत्तिक गुण" प्रदान किए हैं। इसी योनि में केवल मनुष्य को 'बुद्धि और विचार' शक्ति भी मिली है।

पशु–पक्षी आदि सभी जीव भोग योनि ही भोगने के लिए जन्मे। पर क्या मनुष्य योनि भी ऐसी ही है। ना–ना कदापि भी नहीं। 'बुद्धि और विचार' शक्ति का भंडार केवल मानव योनि में ही है, सो मानव का अपने जीवन में 'लक्ष्य' अवश्य होना चाहिए।

बस यही अन्तर है पशुओं और मानवों में। यहाँ मन्त्र में वेद माता ने मनुष्य को 'लक्ष्य' पर चलने के पाँच साधनों पर चर्चा की है, जिससे मानव जीवन अपने अन्तिम लक्ष्य तक पहुँच सकें।

(1)**ज्ञान प्राप्त करना– (तन्तुम् तन्वन् रजसः)** = हे मनुष्य! तू ज्ञान द्वारा अपनी 'बुद्धि विचार' से ज्ञानपूर्वक सभी कर्मों को करता हुआ उन कर्मों का विस्तार कर और उसे पूर्ण करते हुए (**भानुम् अनुइहि**) = उस परमात्मा के दिए हुए प्रकाश व ज्ञान के अनुसार ही चल। महाभारत में भी कहा है कि सृष्टि में मानव से बढ़ कर और कोई श्रेष्ठ योनि नहीं है। "**न हि–मनुष्यात् श्रेष्ठतरं हि किञ्चित्**"। मन्त्र में भी वेद माता यही संदेश दे रही है हे मानव! तू इस भू पर (पृथिवी पर) लौकिक क्रियाकलापों का ताना–बाना बुनता हुआ सूर्य का अनुकरण कर। जैसे सूर्य अपनी धुरी पर स्थित रहता है और अपने प्रकाश से सौर मण्डल को प्रकाशित कर समस्त ग्रहों और उप–ग्रहों को अपनी ओर आकृष्ट रखता है। इसी प्रकार मानव भी मानव धर्म के तहत ही प्रकाशन करे, और स्थिर रहकर अपनी निरन्तर पावन मानवीय सेवाओं से सभी मानवों को अपने प्रति आकृष्ट रखे।

मानव जन्म अनमोल रे–माटी में न रोल रे,

अब तो मिला है–फिर न मिलेगा कभी नहीं, कभी नहीं।

............................जगत् में मनुष्य का सिर ही ऊपर की ओर है जबकि अन्य सभी जीव जन्तुओं का सिर नीचे की ओर है। सो इसी जगत् में 'मनुष्य' को ही 'देवत्व' की ओर बढना है। और यह सब विद्या व बुद्धि के बल पर बढ़ कर हो सकता है क्योंकि बाकी सभी योनियाँ केवल भोग योनियाँ ही हैं।

(2) **ज्योतिष्मतः**– (i) प्रकाश मार्ग पर चलने के लिए चलने के जो–जो साधन हैं उनकी रक्षा करनी है। तभी प्रकाश के पथ को प्रशस्त बनाया जा सकता है, और समाज के सुधार कार्य संभव हो सकते हैं। (**विद्या कृतान्**) = ये प्रकाश वाले मार्ग ही बुद्धि पूर्वक कर्मों से सम्पादित होते हैं, क्योंकि इन मार्गों में चलने के लिए 'ज्ञान व कर्म' का समन्वय होता है। आदि गुरु शंकराचार्य, चाणक्य, नानक, दयानन्द, राजा राम मोहन राय, श्रद्धानन्द, हंसराज और पं लेखराम आदि सभी ने अपने साहित्य द्वारा 'ज्ञान–विज्ञान' की रक्षा की।

मानव एक श्रीमान्–बुद्धिमान प्राण ी है, सो विचार और बुद्धि द्वारा ही कर्मों का सम्पादन करते हुए मानवपथों को वह विलुप्त न होने देवे। उसका यह कर्त्तव्य बनता है कि वह उन सब ज्योतिर्मय पथों की रक्षा करे।

(ii) "**ओं उद्वयं तमसस्परि**" यजु. 35.14–**संध्या के इस उपस्थान मन्त्र के अनुसार** तत्व ज्ञान, आत्मज्ञान और परमात्मज्ञान, इन तीनों के समन्वय से अन्धकार से ऊपर उठकर हम अपने 'स्वः' अर्थात् सुखमय स्वरूप की ओर चलें। पहले 'उत्'–अर्थात् प्रकृति का फिर 'उत्तर' अर्थात् जीव की ज्योति का ज्ञान प्राप्त करें–और अन्त में 'देवमार्ग' से 'परमसूर्य देव' –उस परम ज्योति को प्राप्त होवें।"

हे प्रभो! अंधकार से ऊपर उठकर, देव कोटि में आ जावें।

फिर उससे भी ऊपर उठकर, स्वयं ज्योति को पा जावें।।

(3)'**श्रेष्ठ कर्मों का विस्तार–(अन्–उल्वण म् वयत जोगुवाम् अपः)** = हे मानव! तू पूर्वज उपदेष्टाओं के ऋतु कर्मों को गति दे अर्थात् उनको पूर्ण कर। आदर्श मानवों के कायिक, वाचिक और मानसिक तीनों प्रकार के कर्म अनुल्वण, उलझन रहित, ऋजुतामय सार्थक होते हैं। उनके कर्मों में उलझन, जटिलता और निरर्थकता लेशमात्र नहीं होती।ये सब दानवी कर्मों में होती हैं, मानवी कर्मों में नहीं। त्रिगुणातीत–ये तीन गुणों से मानव जिनसे वह शुद्ध और पवित्र बनकर प्रत्येक संस्था, समाज, राष्ट्र और सम्प्रदाय के लिए वरदान सिद्ध होता है। सो कर्म रहित नहीं होना है कमी भी।

जैसे ध्यान साधना, यज्ञ–स्वाध्याय–सत्संग और योग मार्ग पर चल कर इन सभी साधनों को अपनाकर यह जीव रूपी मनुष्य इहलोक और परलोक दोनों लोकों को सिद्ध कर सकता है। पशु–पक्षी आदि सभी हमारी सेवा हेतु ही हैं और जो ये सेवाएँ हमें देते हैं स्वयं उनका प्रयोग नहीं करते। उसी प्रकार परमात्मा भी जो भी कुछ हमें देता है वह खुद उनका कभी उपयोग नहीं करता।

इसी प्रकार मानव को भी अन्य प्राणियों की सेवा के कार्यों में प्रयुक्त करें जैसे गरीबों को मदद शिक्षा क्षेत्र में व अन्य किसी भी रूप में। इस मनुष्य जन्म में जो बड़े भाग्यों से मिला है–सेवा–सुश्रूषा के कार्य निसंकोच करता जाए, बिना लोभ–लालच के , बिना पद की इच्छा के। कर्म करते समय कभी भी 'मन' में यह भाव न लाए कि ये 'मैं' कर रहा हूँ–अरे बुद्धू करने वाला तो कोई और है–तेरे द्वारा तो केवल कर्म करवाया जा रहा है, क्योंकि जो भी कुछ है, हे मानव! वह तेरा है ही नहीं–फिर तुझे सेवा करने में क्या और क्यों संकोच हो रहा है? सो हे मानव! "तू ज्ञान व विद्या के प्रकाश का अनुसरण करके ही कर्मों का संचालन कर।"

(4) (**मनुर्भवः**) = मनुष्य का चौथा कर्त्तव्य हे कि वह मनुष्य बने। वह सदा विचारशील हो। बिना विचारे कभी भी क्रियाओं का सम्पादन न करे, क्योंकि बिना विचारे–अविविवेक ही तो सब आपत्तियों का कारण होता है। पर आज मनुष्य मानव चोला पाकर अहंकार से ग्रस्त है, और छल–कपट, बेईमानी, चालाकी एवं झूठ के सभी व्यवहार उसके खून में बसते जा रहे हैं। वह यह भूल गया है कि यह श्रेष्ठ चोला केवल उसे ही मिला है इस मानव योनि में। उसके शरीर की बनावट शाकाहारी है। जैसे गाय कभी भी माँस का भक्षण नहीं करेगी–यह उसका स्वाभाविक गुण है। पर मनुष्य तो माँस–मच्छी, अण्डा सभी कुछ चट कर जाता है, फिर वह मनुष्य कहाँ रहा–वह तो पशु से भी बदतर हो गया। वह यह जानता भी है कि वह विचार और बुद्धि से नैमैतिक गुण प्राप्त कर राग–द्वेष, ईर्ष्या और अहंकार को त्यागते हुए उत्तम से उत्तम मार्गों पर चलता हुआ–श्रेष्ठ से श्रेष्ठतर कार्यों द्वारा ही वह उच्च से उच्च लक्ष्य प्राप्त कर सकता है। कवि के शब्दों में–

कुछ तो समय निकाल रे बन्दे, आत्मशुद्धि के लिए।

यह सुन्दर नरजन्म नहीं है केवल विलास के लिए।।

(5) **दैव्यम् जनम् जनयः** – तू दिव्य गुण वाले मनुष्य को ही उत्पन्न कर–जन्म दे। अर्थात् तू स्वयं (अपने) को देव के रूप में कार्यों को विकसित करने वाला हो। वेद माता मन्त्र में स्पष्ट रूप से आदेश दे रही है कि तेरी सन्तान भी दिव्य गुणों से युक्त हो तभी तो दैव्य शक्ति का विस्तार होगा और निश्चित रूप से मानव मोक्ष का अधिकारी बनकर परम आनन्द की प्राप्ति कर सकेगा। अन्यथा तेरे दिव्य गुण तो तेरे साथ ही समाप्त हो जाएँगें फिर तेरा अपना जन्म भी कहाँ सिद्ध हुआ?

आइए, हम सभी मानवों का समादर करें और विश्व में मानवता की पुनः स्थापना करें और गुनगुनाएँ।

मन में श्रद्धा भावों को रखते हुए ईश्वर की अनुभूति बनाएँ।

तुम्हारे दिव्य दर्शन की मैं इच्छा लेके आया हूँ।

पिलादो प्रेम का अमृत पिपासा लेके आया हूँ।।

रत्न अनमोल लाने वाले, लाते हैं भेंट तेरी को

मैं अपने आँसुओं की, अश्रु माला लेके आया हूँ।।

जगत् के रंग सब फीके, तू अपने रंग में रंग देना

मैं अपना यह महाबदरंग, बाना लेके आया हूँ।।

प्रकाश आनन्द हो जाए, मेरी इस अँधेरी कुटिया में

तुम्हारा आसरा–विश्वास, और आशा लेके आया हूँ।।

तुम्हारे दिव्य दर्शन की मैं इच्छा लेके आया हूँ।

मन्त्री
आर्य समाज अशोक विहार
9718965775

श्री कृष्ण का पवित्र और महान जीवन चरित

● कृष्ण चन्द्र गर्ग

श्री कृष्ण महाभारत के सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण पात्र थे। महाभारत का युद्ध द्वापर युग के अन्त में अब से लगभग 5200 वर्ष पूर्व हुआ। श्री कृष्ण के जीवन चरित का प्रामाणिक स्रोत महाभारत पुस्तक ही है। महाभारत के अनुसार श्री कृष्ण का जीवन बड़ा पवित्र और महान था। उन्होंने जन्म से मृत्यु तक कोई भी बुरा काम किया हो– ऐसा नहीं लिखा।

महाभारत के अनुसार श्री कृष्ण की एक पत्नी थी– रुक्मणी। विवाह के बाद श्री कृष्ण ने अपनी पत्नी रुक्मणी के साथ 12 वर्ष तक हिमालय पर्वत पर रहकर ब्रह्मचर्य का पालन किया। उसके पश्चात उनके यहाँ एक पुत्र उत्पन्न हुआ जिसका नाम प्रद्युम्न रखा गया। प्रद्युम्न बड़ा होकर हू–ब–हू अपने पिता श्री कृष्ण जैसा ही दिखता था।

महाभारत में राधा नाम की किसी स्त्री का कोई उल्लेख नहीं है।

राजसूय यज्ञ (महाभारत के युद्ध के पहले की अवस्था है)– पाण्डवों के राज्य का तेज़ सभी जगह पहुँच चुका था। प्रजा सुखी थी। सभी राजे–महाराजे उनका सिक्का मानते थे। तब युधिष्ठिर ने महाराजाधिराज (चक्रवर्ती सम्राट) की उपाधि पाने के लिए राजसूय यज्ञ की ठानी। इसके सम्बन्ध में उसने अपने मन्त्रियों और भाईयों को बुलाकर पूछा– क्या मैं राजसूय यज्ञ कर सकता हूँ ? सबने जवाब दिया – हाँ, अवश्य कर सकते हैं, आप इसके योग्य पात्र हैं। व्यास आदि ऋषियों से यही प्रश्न किया। उन सबने भी हाँ में ही उत्तर दिया। परन्तु युधिष्ठिर को श्री कृष्ण से सम्मति लिए बिना तसल्ली न हुई। उन्होंने श्री कृष्ण से कहा– हे कृष्ण! कोई तो मित्रता के कारण मेरे दोष नहीं बताता, कोई स्वार्थवश मीठी–मीठी बातें करता है। पृथ्वी पर ऐसे लोग ही अधिक हैं। उनकी सम्मति से कोई काम नहीं किया जा सकता। आप इन दोषों से रहित हैं। इसलिए आप ही मुझे ठीक–ठीक सलाह दें। तब श्री कृष्ण बोले – महान पराक्रमी जरासन्ध के जीते जी आपका राजसूय यज्ञ पूरा न होगा। उसको हराने के बाद ही यह महान कार्य सफल हो सकेगा।

जरासन्ध वध – जरासन्ध बड़े विशाल और वैभवशाली राज्य मगध का राजा था। वह बड़ा क्रूर और अत्याचारी था। उसने अपने यहाँ 86 राजाओं को बन्दी बना रखा था और यह ऐलान कर रखा था कि जब इनकी संख्या 100 हो जाएगी वह इन सबकी बलि चढ़ा देगा। यह अत्याचार श्री कृष्ण को सहन नहीं था। इसी कारण से वे उसे समाप्त करना चाहते थे। जरासन्ध का जन, धन, बल इतना अधिक था कि रणक्षेत्र में उसे हराना असम्भव था। श्री कृष्ण ने नीति से जरासन्ध का भीम से युद्ध करवा दिया जिसमें जरासन्ध मारा गया। तब श्री कृष्ण ने सभी बन्दी राजाओं को मुक्त कर दिया और जरासन्ध के पुत्र सहदेव को मगध का राजा बना दिया।

प्रथम अर्घ्य (पहला सम्मान) – राजसूय यज्ञ आरम्भ होने पर भीष्म पितामह ने युधिष्ठिर से कहा कि उपस्थित राजाओं में जो सबसे श्रेष्ठ है उसे ही प्रथम अर्घ्य देना चाहिए। युधिष्ठिर ने भीष्म से ही पूछ लिया कि ऐसा व्यक्ति कौन है जो पहले अर्घ्य पाने का पात्र है। इस पर भीष्म ने कहा– जैसे चमकने वाले सभी तारों में सूर्य सबसे अधिक प्रकाशमान है वैसे ही इन सब राजाओं में श्री कृष्ण तेज़, बल, पराक्रम में सबसे अधिक हैं। इसलिए वे ही प्रथम अर्घ्य पाने के योग्य हैं। तब युधिष्ठिर की आज्ञा पाकर सहदेव ने श्री कृष्ण को प्रथम अर्घ्य दिया।

सन्धि का प्रस्ताव– पाण्डवों ने 12 वर्ष वन में बिताने के बाद 13वाँ वर्ष अज्ञातवास में बिताया। फिर कौरवों से अपना राज्य माँगा। जब कौरवों ने राज्य देने से इनकार कर दिया तब पाण्डवों ने युद्ध का निश्चय कर लिया। अन्तिम कोशिश के तौर पर श्री कृष्ण कौरवों के पास जाने को तैयार हुए सबने उन्हें रोका कि कौरव मानने वाले नहीं हैं तब श्रीकृष्ण ने कहा कि संसार में कार्य सिद्धि के दो आधार होते हैं– एक मनुष्य का पुरुषार्थ, दूसरा ईश्वर इच्छा। मैं पुरुषार्थ तो कर सकता हूँ, ईश्वर इच्छा मेरे अधीन नहीं है। इसलिए फल मैं नहीं जानता। मैं इतना जानता हूँ कि मुझे शक्तिभर प्रयास कर लेना चाहिए।

हस्तिनापुर पहुँचने पर महात्मा विदुर ने श्री कृष्ण से कहा कि दुर्योधन मानने वाला नहीं है। अतः आप सन्धि का प्रयत्न छोड़ दें। तब श्री कृष्ण ने कहा – सारी पृथ्वी खून से लथपथ होती देख रहा नहीं जाता। और यह भी कहा– आपत्ति में पड़े अपने व्यक्ति को बालों से पकड़कर भी खींचने का यत्न करे फिर भी मनुष्य निन्दा का पात्र नहीं होता।

श्री कृष्ण ने सन्धि के लिए, दुर्योधन, कर्ण से बात की, उन्हें समझाने का प्रयास किया। परन्तु सफलता न मिली। इस दौरान दुर्योधन ने उन्हें अपने यहाँ भोजन करने के लिए कहा। तब श्री कृष्ण बोले – राजन्! किसी के घर का अन्न दो कारणों से खाया जाता है – या तो प्रेम के कारण या आपत्ति पड़ने पर। प्रीति तो तुम में नहीं है और संकट में हम नहीं हैं।

यजुर्वेद का मन्त्र है–

यत्र ब्रह्म च क्षत्रं च सम्यञ्चौ चरतः सह।
तं लोकं पुण्यं प्रज्ञेषं यत्र देवाः सहग्निना।।

इस वेद मन्त्र में बताया गया है कि सुखी और उन्नत जीवन के लिए दो गुणों की आवश्यकता है– एक विद्वता और दूसरा बल। श्री कृष्ण में ये दोनों गुण विद्यमान थे। उनकी बुद्धिमत्ता और नीति के कारण ही कम शक्ति के होते हुए भी महाभारत के युद्ध में पाण्डवों ने कौरवों पर विजय प्राप्त की और शक्तिशाली, अत्याचारी राजा जरासन्ध को मार गिराया। श्री कृष्ण ने शारीरिक बल के सहारे ही अत्याचारी राजा कंस को यमलोक पहुँचा दिया और घमण्डी शिशुपाल का वध कर दिया।

गीता में श्री कृष्ण ने योग की परिभाषा ऐसे की है– योगः कर्मसु कौशलम्। अर्थात कार्य को कुशलता पूर्वक करना योग है। इस दृष्टि से भी कृष्ण पूर्ण योगी थे क्योंकि उन्होंने जो भी काम किए उनमें अपनी बुद्धि, बल और नीति से सफलता प्राप्त की।

महाभारत के युद्ध में जब अर्जुन और कर्ण के बीच लड़ाई हो रही थी तब कर्ण के रथ का पहिया पृथ्वी में धंस गया और वह उसे निकालने के लिए रथ से नीचे उतरा। तब कर्ण ने अर्जुन को लड़ाई के धर्म की दुहाई दी और वह चिल्लाया कि निहत्थे पर वार करना धर्म नहीं है। इस पर कृष्ण बोले – अरे कर्ण! अब धर्म–धर्म चिल्लाता है। परन्तु–

1. जिस समय तुम, दुश्शासन, शकुनि और सौबल सब मिलकर ऋतुमती द्रौपदी को घसीट लाए थे, उस समय तुम्हें धर्म की याद न आई।

2. जब तुम बहुत से महारथियों ने मिलकर अकेले अभिमन्यु को घेरकर मार डाला था, उस समय तुम्हारा धर्म कहाँ गया था।

3. जब 13 वर्ष के वनवास के बाद पाण्डवों ने अपना राज्य माँगा और तुमने नहीं दिया, तब तुम्हारा धर्म कहाँ गया था।

4. जब तुम्हारी सम्मति से दुर्योधन ने भीम को विष खिलाकर नदी में डाल दिया था, तब तुम्हारा धर्म कहाँ गया था।

5. जब वारणावत नगर में लाख के घर में तुमने सोते हुए पाण्डवों को जलाने का प्रयत्न किया था, तब तुम्हारा धर्म कहाँ गया था

कर्ण को इतना कहकर श्री कृष्ण ने अर्जुन से कहा कि इस प्रकार दलदल मे फँसे कर्ण का वध करना पुण्य है, पाप नहीं। दूसरे ही क्षण कर्ण अर्जुन के बाण से जख्मी होकर गिर गया। यह थी कृष्ण की नीतिमत्ता।

श्री कृष्ण को पाण्डवों द्वारा कौरवों के साथ जुआ खेलना, जूए में सब कुछ हार जाना और वन में चले जाना इन सब बातों का पता तब चला जब पाण्डव वन में रह रहे थे। श्री कृष्ण वन में पाण्डवों से मिलने गए। वहाँ जाकर उन्होंने कहा कि यदि मैं द्वारिका में होता तो हस्तिनापुर अवश्य आता और जूए के बहुत से दोष बताकर जुआ न होने देता। ऐसा था श्री कृष्ण का नैतिक बल और आत्मविश्वास। दूसरी ओर भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य, धृतराष्ट्र आदि बड़े लोग जुआ और जूए से जुड़े अन्य दुष्कर्म अपनी आँखों के सामने देखते रहे, पर उनमें से किसी में भी उसे रोकने का साहस न हुआ।

831 सैक्टर 10, पंचकूला, हरियाणा
दूरभाष: 0172–4010679

☞ पृष्ठ 04 का शेष

बोध कथाएँ...

और बादशाह को उसने अपने पास की रूखी–सूखी रोटी खिला दी, दूर से लाकर पानी भी पिला दिया। खा–पीकर बादशाह प्रसन्न हुआ, किसान से बोला– तुम क्या काम करते हो?"

किसान ने कहा– "खेती–बाड़ी करता हूँ, बहुत कठिनता से जीवन–निर्वाह होता है।"

अकबर ने कहा– "सुनो! मैं हूँ भारत का बादशाह। कभी आवश्यकता पड़े तो मेरे पास आगरा आना।" यह कहकर वह चला गया।

तब कई वर्ष बीत गए। एक बार वर्षा न हुई। किसान का खेत सूख गया। उसने सोचा– बादशाह के पास चलता हूँ, उससे कुछ मदद माँगूँगा। वह अपने गाँव से चला और राजधानी में पहुँचा। देखा, बादशाह की सवारी जा रही है। बहुत बड़ा लाव–लशकर उसके साथ है। बादशाह हाथी पर बैठा है। किसान ने देखते ही आवाज़ दी– "अकबरा.... ओ अकबरा!"

सुननेवाले आश्चर्यचकित रह गए कि यह कौन असभ्य आ गया? किसी ने कहा– "इसका सिर काट दो! यह असभ्य है!"

अकबर ने भी इस आवाज़ को सुना। दूर से इसको देखा, पहचान लिया। उसने अपने पास बुलाया। हाथी पर अपने पास बैठा लिया। महल में पहुँचा तो नौकरों को आज्ञा दी कि "यह मेरे ही कमरे में सोएगा। इसने मेरी जान बचाई थी। मेरे कमरे में इसके लिए पलँग लगा दो।' रात को अपने साथ खाना खिलाया। उसके सो जाने पर सोया।

प्रातःकाल किसान उठा तो देखा कि बादशाह एक कपड़ा बिछाकर उस पर बैठें है। घुटने टेककर, हाथ फैलाकर, पता नहीं किससे क्या माँग रहे हैं। बादशाह नमाज़ पढ़ रहा था। निवृत्त हुआ तो किसान ने पूछा– "यह तुम क्या करते थे?"

बादशाह ने कहा– "आशीर्वाद माँगता था।"

किसान ने कहा– "किससे?"

बादशाह ने कहा– "भगवान् से।"

किसान ने कहा– "अच्छा!" और अपनी लाठी उठाकर चल पड़ा।

बादशाह ने कहा– "अरे तुम कहाँ जाते हो? यह तो बताओ कि तुम किसलिए आए थे?"

किसान ने कहा– "बादशाह! मैं आया था तुमसे मदद मांगने, परन्तु यहाँ आकर देखा कि तुम भी माँगते हो। उसी से मैं भी माँग लूँगा। तुम स्वयं भिखारी, तुमसे क्या माँगूँगा मैं।"

ऐसा अटल विश्वास जिसके हृदय में है, वही परमात्मा की उपासना का अधिकारी है।

'मीर' बन्दों से काम कब निकला।
माँगना है जो कुछ खुदा से माँग।।

पुस्तक समीक्षा

शाहपुरा आर्य समाज का शत् वर्षीय गौरवपूर्ण इतिहास

शाहपुरा आर्यसमाज का गौरवपूर्ण इतिहास : लेखक श्री रामस्वरूप बेली, प्रकाशक – बेली परिवार सेवा समिति, शाहपुरा – 311404 (राजस्थान), सम्पादन – लाल चन्द बेली, पूर्व मंत्री, वरिष्ठ नागरिक संस्थान, शाहपुरा, सहयोगी सम्पादक– हरिकृष्ण निगम, वरिष्ठ लेखक एवं पत्रकार मुम्बई, प्रकाशन तिथि – 27 मई 2016, पृष्ठ 168 सजिल्द व रंगीन पृष्ठों पर चित्र सहित। मूल्य रुपये 150/–

हाल में प्रकाशित उपर्युक्त ग्रन्थ स्व. श्री रामस्वरूप बेली, सिद्धांत शास्त्री जिनका जन्म 1920 में हुआ था और देहावसान 1997 में द्वारा रचित एक दुर्लभ व अद्भुत ग्रंथ है। अपने समय के वे एक अनूठे पर्यवेक्षक थे और जीवन पर्यन्त, लगभग अर्धसती से अधिक वे वेदों के अध्येता व आर्यसमाज के प्रखर उद्घोषक बने रहे। उनका लेखकीय व स्वयं के प्रकाशक का व्यक्तित्व प्रखर था। पं. हरिश्चन्द्र जी प्रज्ञाचक्षु का संक्षिप्त जीवन परिचय, शिव संकल्प एवं सहपाठी सम्मेलन स्मारिका और महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन परिचय व उनके 'सत्यार्थ प्रकाश' की सूक्ष्म दृष्टि तत्कालीन आर्यसमाज के सदस्यों के लिए अत्यन्त प्रेरणादायक थी, पर उपर्युक्त पुस्तक राजस्थान में शाहपुरा के शतवर्षीय इतिहास की पृष्ठभूमि के कारण उसे अनूठा बनाती है। इसमें दुर्लभ तथ्यों का अल्पज्ञात इतिहास जिस शैली में अभिलिखित है वह आज की पीढ़ी के लिए आर्यसमाज के सिद्धांतों के प्रति समर्पण या प्रतिवेदना क्या होती है इसे अंकित करता है।

इसे आज के युग की नया–नया मोड़ देने वाली घटना मानना चाहिए। जब स्वामी दयानन्द का शाहपुरा में प्रवास हुआ उन्होंने वहाँ के धर्म–प्रवण शासकों को आर्य धर्म सक्रिय रूप से अपनाने की प्रेरणा दी थी। शुद्धिकरण आन्दोलन, नारी–शिक्षा, विधवा–विवाह व नारी–मुक्ति के सभी प्रयासों को राज्य की सक्रिय नीति बनाना उस समय अकल्पनीय था। शाहपुरा के आर्यसमाज का हैदराबाद मुक्ति आन्दोलन में सक्रिय भाग लेना, आज हमारा प्रबुद्ध वर्ग भी लगता है, भूल गया है। राष्ट्र की स्वतन्त्रता के संघर्षों में शाहपुरा द्वारा क्रान्तिवीरों को पूरा संरक्षण दिया गया था। बाल विवाह के विरुद्ध शारदा एक्ट द्वारा ब्रिटिश शासन पर दबाव भी डाला गया था। गो–संवर्धन और गो वध के विरुद्ध वैदिक अनुष्ठानों के आचरण का पालन करते हुए आजीवन वैदिक अध्ययन करते हुए रामस्वरूप जी के अंतिम समय में अस्वस्थ होते हुए भी शाहपुरा के शतवर्षीय इतिहास का प्रणयन जारी रखा और अपने सभी संपर्क सूत्रों से पत्राचार में अपनी ओर से कभी विलम्ब नहीं करते थे। संस्कृत शिक्षा व वेदाध्ययन के प्रति उनका लगाव इतना था कि एक निष्ठावान लगनशील आर्यसमाजी के रूप में वे वयोवृद्ध होने पर भी सदा लिखते रहते थे। उपर्युक्त ग्रंथों में श्रद्धांजलि व सान्त्वना संदेश में या भूमिका के रूप में चाहे अन्तर्राष्ट्रीय राम स्नेह सम्प्रदाय के आचार्य राम दयाल महाराज हो, भवानीलाल जी भारतीय हो, या राज्यसभा सदस्य तरुण विजय हो, सभी ने श्री रामस्वरूप बेली जी के निराभिमानी संत जैसे आचरण वाले देवी चरित्र का चित्रांकन किया है।

विश्व में कदाचित विरले महापुरुष होंगे जिन्होंने अपने स्वयं के देहावसान की आचार संहिता पहले ही परिवार को बताकर लिपिबद्ध रूप में सौंप दी हो। श्री रामस्वरूप बेली जी ने लिखा कि उनकी मृत्यु के पश्चात् उनके शवयान को ओ३म् ध्वज से सजाया जाए। किसी की ओर से पगड़ी न रखी जाए और शवयात्रा में आगे एक ठेले में लाउड स्पीकर द्वारा ईश्वर स्तुति, प्रार्थना, उपासना मंत्रों के साथ श्मशान तक पहुँचकर कपूर आदि से अग्नि प्रज्ज्वलित करें। अन्त्येष्टि कर्म में लगभग 20 किलो घृत व 20 किलो चन्दन के चूरे की व्यवस्था करें। उनके अस्थि भस्म को तीसरे दिन संचय कर जीप द्वारा बीहड़ वाले खेत में पहुँचाए और उनका विसर्जन खेत में सबके सहयोग से कर दें। मिट्टी तल में मिलाने के बाद मेरी मृतात्मा के लिए कोई कर्तव्य कर्म नहीं है। अस्थियों को गंगाजल में न प्रवाहित करें। न श्राद्ध आदि कर्म किये जाए। प्रसाद के रूप में सिर्फ गुड़ बाँटा जाएँ। श्री रामस्वरूप बेली जैसे अनोखे पुरुष का लिखित निर्देश एक ऐसा उदाहरण है जो उनकी सादगी, स्पष्टवादिता व तार्किक बुद्धि को उजागर करता है।

श्री लालचन्द बेली अपने पिता के अन्तिम समय के भावपूर्ण संस्मरण में लिखते हैं कि जब उनके पिता रामस्वरूप जी का 27 मई 1997 को दोपहर 1 बजे एकाएक देहावसान हुआ तो उससे। उससे पहले वे स्वामी दयानन्द के चित्र को निहार रहे थे और ओ३म् के उच्चारण के साथ उन्होंने अंतिम साँस ली थी। अपनी 66वीं वर्षगाँठ से लेकर 76वीं वर्षगाँठ तक प्रतिवर्ष पिताजी एक बड़े यज्ञ का आयोजन करते थे और विद्वानों को बुलाकर आशीर्वाद प्राप्त करते रहे। उनके प्रमुख मित्र वंशीलाल जी सोनी, सोहनलाल जी शारदा, रामदयाल जी और बंसीलाल जी दीपा थे जो सदैव बड़े अवसरों पर उपस्थित रहते थे। आर्यसमाज शाहपुरा के प्रतिनिधियों के रूप में रामस्वरूप जी अजमेर, जयपुर, दिल्ली, मथुरा, मुम्बई आदि स्थानों पर जाते थे। कोर्ट आर्यसमाज मुम्बई की हीरक जयन्ती पर वे एक पूरी बस लेकर गए थे। शाहपुरा से वे भक्तों का दल लेकर सभी की दीक्षा शताब्दी के अवसर पर मथुरा और दिल्ली में हीरक जयन्ती के अवसर पर गए थे।

आर्यजगत् को शाहपुरा राज्य का सबसे बड़ा योगदान यह था कि जब स्वामी दयानन्द जी 25 जुलाई 1982 को चित्तौड़ पधारे उस समय ब्रिटिश सरकार की ओर से लार्ड रिपन के आम दरबार में राजपूताना के सभी राजा महाराजा उपस्थित थे। शाहपुरा के राजाधिराज श्री नाहर सिंह जी का स्वामी जी से प्रथम साक्षात्कार चित्तौड़ में हुआ था और उन्होंने स्वामी जी को शाहपुरा पधारने का निमंत्रण दिया। पूर्व आमंत्रण के अनुसार स्वामी जी चितौड़ से उदयपुर आए और महाराज सज्जन सिंह को धार्मिक उपदेश देते रहे। बाद में नाहरसिंह जी के अलावा बाद में उनके सभी वंश परम्परा में स्वामी जी के प्रति श्रद्धा और आदर रखते थे। आर्यसमाज के रियासत में औपचारिक रूप से संगठन ने वहाँ की काया पलट दी।

स्वामी दयानन्द की कुटिया व संलग्न परिसर आज भी शाहपुरा ही नहीं देश के इतिहास का एक अंग बन चुका है। हम स्वयं स्वामी जी को एक गुजराती के रूप में संस्कृत और हिन्दी के विद्वान के रूप में परिचित रहे हैं। यह एक अल्पज्ञात तथ्य है कि उनके पिता कर्सन जी तिवारी उत्तरप्रदेश से टंकारा आए एक कट्टर कान्यकुब्ज शैव ब्राह्मण थे और अपने, भाइयों व अन्य परिजनों से सदैव दुःखी होकर उन्हें प्रताड़ित भी करते थे कि वे व्रत व उपहास आदि का कड़ाई से पालन करें। 13 वर्षीय मूलशंकर पिता के मात्र शिवलिंग ही नहीं अन्य पर्वों पर विधिवत् पूजा या व्रत आदि की ढिलाई से पालन होते देख उनके अपशब्दों की बौछार से त्रस्त होते थे जब उन्हें मर्मान्तक पीड़ा होती थी। शिवरात्रि के दिन वे चार प्रहर में चार बार शिव की पूजा होती थी। थककर जरा सी भी नींद आने पर वे कहर ढा देते थे। वह जड़ेश्वर का विशाल मंदिर था जहाँ बालक मूल शंकर दूसरों के ऊँघने के बाद भी अपने तेरहवें वर्ष में जागरण कर रहा था। मन्दिर की निस्तब्धता के बीच चूहे महादेव की पिण्डी के ऊपर दौड़कर महादेव पर जो चावल चढ़ाए गए थे उन्हें खाने लगे थे। इस प्रकरण ने बालक मूलशंकर को विचलित कर दिया था और इस घटना ने देश का आध्यात्मिक इतिहास ही बदल दिया था।

श्री रामस्वरूप बेली जी के उपर्युक्त ग्रंथ की महर्षि दयानन्द के ऊपर उपलब्ध विपुल साहित्य से तुलना करना आवश्यक नहीं है पर उनके जीवन चरित्र के उस घटना पर प्रकाश डाला गया है जो सामान्य पाठकों से अब तक छिपी हुई थी। यदि इसकी तुलना की भी जाए तो प्रसिद्ध लेखक देवेन्द्र नाथ मुखोपाध्याय द्वारा स्वामी जी के जीवन पर लिखे ग्रंथ के समान यह भी लोकप्रिय कहा जा सकता है।

यदि संक्षेप में सीमित शब्दों में इस ग्रंथ के विषय में लिखा जाए तो यही कहना समीचीन होगा कि आर्यसमाज के आन्दोलन के अभ्युदय व इसकी प्रगति में शाहपुरा के राजाधिराज नाहरसिंह जी एवं उम्मेदसिंह जी तथा सुदर्शन देव जी का महत्वपूर्ण योगदान रहा था। शाहपुरा के समस्त क्रियाकलापों व नीति विषयक सुधार व उनकी वैदिक आत्मा की मूक सानी स्वामी जी की कुटिया आज भी हमारे समक्ष है। निजी रूप में मैं स्वयं लालचन्द वेली जी का आभारी हूँ कि उन्होंने अपने स्वास्थ्य की परवाह न करते हुए भी अस्वस्थता की स्थिति में इस ग्रन्थ का सम्पादन कर इसे मूर्त रूप दिया है। यह ग्रंथ पठनीय ही नहीं संग्रहणीय भी है।

पत्र/कविता

विक्रमी सवंत् 2075 में संकल्प लेकर आर्य बनें

विक्रमी सवंत 2075 प्रारम्भ हो चुका है। सवंत् 2075 देश विदेश के सभी सामाजिक प्राणियों, जीव जन्तुओं, पशु पक्षियों के लिए मगंलमय हो! समाज, देश व विश्व में सुख–शांति, खुशहाली व गौरवता से फले फूले। भ्रष्टाचार, अनुशासनहीनता व नैतिकपतन का अन्त हो। राष्ट्रीय साप्ताहिक ''आर्यजगत'' के माध्यम से मेरी ईश्वर से प्रार्थना है कि भारतीय नववर्ष विक्रमी सवंत 2075 केवल हमारे आर्यवत देश के लिए नहीं अपितु समुचे विश्व के लिये मंगलमय हो। हम सब महर्षि दयानन्द जी समाज सुधारक, देशभक्त प्रेरणासोत्र से जीवन चरित्र से प्रेरणा लेकर संकल्प करें कि आर्य बनें, आर्य बनायें। आर्यसमाज के सिद्धान्तों व नियमों का पालन करके समूचे जगत में बुराईयों से फैले अन्धकार को मिटायें।

देशबन्धु
आर जैड127, प्रथम तल, सेवा पार्क
उत्तम नगर, नई दिल्ली–59

****

ऐसा होते रहना चाहिए

डी.ए.वी. कॉलेज मैनेजिंग कमेटी, पहाड़गंज, नई दिल्ली–110055 द्वारा संचालित 810 कालेजों में, नए शिक्षा सत्र, प्रारम्भ होने के प्रथम दिन, वैदिक धर्म की पद्धति से, हवन करने का प्रावधान है।

यह अति सराहनीय और प्रेरणास्पद कार्य है।

यदि आपके कालेज में, हवन नहीं होता है तो आपसे अनुरोध है कि आप भी, 2018–19 के शिक्षा सत्र के प्रथम दिन, हवन कराने की व्यवस्था करें और ऐसा भविष्य में, होते रहना चाहिए।

हवन की फोटो खिंचवाकर और संक्षेप में समाचार लिखकर, उसे आर्य जगत् (साप्ताहिक) मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 को, प्रकाशनार्थ, अवश्य भेजें।

आशा है उपयोगी सुझाव पर अमल होगा जिससे डी.ए.वी. में आर्य समाज के प्रचार को बल मिलेगा।

इन्द्रदेव गुलाटी (म्यांमार वाले)
5/491 लक्ष्मीनगर
बुलन्दशहर 203001, उ.प्र.

****

स्वावलम्बन, जीवनयापन का आधार दिया

दयानन्द के निर्वाण से, उपजा था दु:ख बड़ा भारी।
आँखों से आँसू टपके, रोयी थी जनता सारी।।
आर्यो के मन में सोच विचार, होने लगा था चिन्तन।
स्मारक बने दयानन्द जी का, कर रहे आर्य नाम का मन्थन।।
आर्य समाज लाहौर में होने लगे महान विचार।
कोई कहे गुरुकुल खोलो, कोई कर रहा विद्यालय का सुविचार।।
लाहौर आर्य समाज बड़ा ही था, विश्व में मतवाला।
बैठक में प्रस्ताव पास कर, यह विचार पवित्र कर डाला।।
पं. गुरुदत्त ने मन में चिन्तन कर, डी.ए.वी. नाम सुझाया।
सभी आर्यों ने सर्वसम्मति से, डी.ए.वी. नाम का मान बढ़ाया।।
चिर स्थायी स्मारक बन कर, शिक्षा का विस्तार किया।
अंग्रेजों के साथ–साथ वैदिक, धर्म संस्कृति का प्रचार किया।।
डी.ए.वी. ने स्वावलम्बन, जीवन यापन का आधार दिया।
आचार्य करण डी.ए.वी. में आकर, मैंने शिक्षा सेवा को साकार किया।।

आचार्य करणसिंह शास्त्री
एस.सी. डी.ए.वी. पब्लिक
स्कूल, सैक्टर–56, नोएडा

व्यंग्य

नेता कथा अपार

धूर्त विराजे मंच पर, पहन गले में हार
तोता रटंत कर रही, पब्लिक जय जयकार।

सत्ता कुर्सी खेल में, कर्फ्यू की भरमार
नेता के षडयंत्रों से, जन गण हुआ शिकार।

नेता का जादू चले, बिन चाकू तलवार
पंच वर्ष में हो गए, होटल बंगला कार।

बिन भय को हो रहा, खुलकर भ्रष्टाचार
अरबों खरबों रुपये, नेता गया डकार।

राष्ट्रभक्त नेता की, नहीं रही दरकार
दागी तस्कर माफिया, हैं आज की सरकार।

जमकर लूटा देश को, नेता ने हरबार।
कितना ही लिखते रहो, नेता कथा अपार।

दिलचस्प
चूरू–331001
राजस्थान

भजन

विजय 'अरुण'

हे परमेश्वर सत, चित, आनंद।
तू विमल, मनोहर, तेजरूप।
किस ने देखा तेरा स्वरूप।
तू सीमाओं में नहीं बंद।
हे परमेश्वर सत्, चित, आनंद।।

तू अति विशाल, तू अति महान।
फिर भी कण कण में विद्यमान।।
तू बंधन में फिर भी स्वच्छंद।
हे परमेश्वर सत्, चित, आनंद।

तेरी महिमा इतनी अपार।
क्या गाए उस को गीतकार।।
असमर्थ शब्द, असमर्थ छंद।
हे परमेश्वर सत्, चित, आनंद।

28/ग्रीन पार्क
(उदीक्षा उद्याने के सामने)
नाईगांव (पू.)
मुम्बई

भूल सुधार

आर्य जगत् के पाठकों से निवेदन है कि आर्य जगत् के दिनाँक 13–05–2018 के अंक में "स्वतन्त्रता के उपासक महाराणा प्रताप" नामक शीर्षक से एक लेख पृष्ठ संख्या 3 पर प्रकाशित हुआ है। टंकण की ग़लती से उनकी मृत्यु की तिथि 29 जनवरी 1557 छप गई, कृपया इसे दिनाँक 29 जनवरी 1597 पढ़ें

गोपीचन्द कॉलेज अबोहर में 11 कुण्डीय यज्ञ से मनाया स्थापना दिवस

गोपीचन्द आर्य महिला कॉलेज अबोहर में संस्था के 47वें स्थापना दिवस के उपलक्ष्य में प्राचार्या डॉ. रेखा सूद हाण्डा के निर्देशन एवं आर्य युवा समाज के संयोजकत्व में 11 कुण्डीय यज्ञ का आयोजन हर्षोल्लासपूर्वक किया गया। यज्ञ के मुख्य यजमान सेठ गोपीचन्द जी के पौत्र एवम् कॉलेज के चेयरमेन श्री देवमित्र आहूजा एवम् अन्य यज्ञ–वेदियों पर स्थानीय एडवाइज़री कमेटी के माननीय सदस्य श्री विमल ठठई, डॉ सुभाष नागपाल, चौ. धनपत राय सियाना, कैम्पस व निकटवर्ती नगरों मलोट, गिद्दड़बाहा तथा हरिपुरा की डी.ए.वी. संस्थाओं के प्राचार्यगण व डॉ. उर्मिल सेठी, डॉ. राजेश महाजन, *श्रीमती कुसुम खूंगर, मैडम टिंकु, डॉ. आर.* के.महाजन, डॉ. सुभाष चावला, व श्रीमती स्मिता नारंग यजमान के रूप में उपस्थित थे।

वैदिक कन्या गुरुकुल फतूही (श्री *गंगानगर राज.*) से विशेष रूप से आमन्त्रित स्वामी सुखानन्द जी ने ब्रह्मा पद को सुशोभित किया व उनके साथ पधारे स्वामी राममुनी तथा आश्रम की ब्रह्मचारिणी छात्राओं ने सुमधुर वेद–पाठ गायन से कॉलेज प्रांगण को गुँजायमान कर सकारात्मक ऊर्जा प्रवाहित कर दी। ओ३म् नामांकित ध्वजारोहण व ' ओ३म् है जीवन हमारा' भजन से सारा वातावरण ओ३म्मय बन गया। हवन–यज्ञोपरांत श्री देवमित्र ने स्वामी सुखानन्द का अभिनंदन किया।

स्वामी जी ने अपने प्रवचन में यश का महत्व बताते हुए उसकी विस्तृत व्याख्या की व श्री देवमित्र ने कॉलेज की सर्वतोप्रकारेण उन्नति की कामना करते हुए इस गरिमामय आयोजन के लिए साधुवाद दिया।

प्राचार्या जी ने अपने वक्तव्य में सेठ गोपीचन्द जी के सेवाकार्यों का उनकी पुण्यतिथि पर श्रद्धापूर्वक स्मरण करते हुए कॉलेज की अभूतपूर्व उपलब्धियों को गिनाते हुए सबसे सहयोग व स्नेह के लिये आभार व्यक्त किया। शान्तिपाठ, प्रसाद वितरण व अल्पाहार के साथ सभी को स्थापना दिवस की सुखद शुभकामनाएं दी गईं।

रक्त का कोई विकल्प नहीं- प्रकाश आर्य

रक्त का कोई विकल्प नहीं है, इसलिए रक्तदान को जीवन दान कहा जाता है। अधिक से अधिक लोग स्वैच्छिक रक्तदान करें ताकि जरूरतमंदों को रक्त उपलब्ध हो सके।

उक्त विचार सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा नई दिल्ली के महामंत्री प्रकाश आर्य ने तलवंडी स्थित एस.के. साधक मेमोरियल ट्रस्ट द्वारा संचालित कृष्णा रोटरी ब्लड बैंक में आर्य समाज द्वारा आयोजित रक्तदान शिविर में रक्तदाताओं का उत्साहवर्द्धन करते हुए व्यक्त किए।

आर्य समाज के जिला प्रधान अर्जुनदेव चड्ढा ने कहा कि रक्तदान ऐसा दान है जिससे दूसरे का जीवन बचाया जा सकता है। कृष्णा रोटरी ब्लड बैंक के निदेशक वरिष्ठ पेथोलोजिस्ट आर्य ने कहा कि रक्तदान के संबंध में जागरूकता की आवश्यकता है, कोटा में रक्तदान एक परंपरा बनता जा रहा है, आर्य समाज के युवा किशन आर्य (हरियाणा वाले), वेदमित्र वैदिक व अन्य लोगों ने रक्तदान किया।

इस अवसर पर महावीर नगर आर्य समाज के प्रधान आरसी आर्य, मंत्री राधाबल्लभ राठौर, आर्य विद्वान पंडित शोभाराम आर्य ने मंत्रोच्चारण के साथ अतिथियों का स्वागत किया। कृष्णा रोटरी क्लब बैंक की ओर से डॉ. सौरभ गुप्ता ने अतिथियों को स्मृति चिह्न भेंट किए।

डी.ए.वी. (थर्मल) पानीपत के खिलाड़ियों ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर लहराया जीत का परचम

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल थर्मल के खिलाड़ियों स्तर पर आयोजित ताईक्वांडों में पदक जीत कर न केवल विद्यालय का अपितु अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर देश का नाम भी रोशन किया है। मलेशिया में 27 से 29 अप्रैल तक कोलालपुर में इन्टरेशनल ताईक्वांडों एशियन स्कूल्स चैम्पियनशिप आयोजित की गई जिसमें विद्यालय के खिलाड़ी अनमोल खर्ब ने स्वर्ण पदक, निखिल खर्ब ने कांस्य पदक तथा विद्यालय के खेल प्रशिक्षक श्री अरूण कुमार ने भी स्वर्ण पदक प्राप्त कर विद्यालय का नाम रोशन किया है। खिलाड़ियों के विद्यालय पहुँचने पर प्रार्थना सभा में फूल मालाओं से जोरदार स्वागत किया गया। खिलाड़ियों के माता–पिता को भी शॉल तथा पुष्पगुच्छ भेंट कर स्वागत किया गया।

श्री विवेक चौधरी (एस.डी.एम. पानीपत) व विद्यालय के चेयरमैन श्री सतीश कुमार वधवा (चीफ इंजीनियर थर्मल) ने अनमोल खर्ब और निखिल खर्ब को मिठाई खिलाकर आशीर्वाद दिया तथा आस्ट्रेलिया में सितम्बर में होने वाली वर्ल्ड चैम्पियनशीप में पदक जीतकर माता–पिता विद्यालय एवं देश के नाम रोशन करने के लिए प्रेरित किया एवं आशीर्वाद दिया।

प्राचार्या श्रीमती ऋतु दिलबागी ने बताया कि दोनों खिलाड़ियों तथा खेल प्रशिक्षक के अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पदक प्राप्त करने पर विद्यालय में उत्सव का वातावरण है। इस उपलब्धि से विद्यालय के अन्य बच्चों को भी जीवन में कुछ विशेष करने की प्रेरणा मिलेगी। इस अवसर पर खेल विभागाध्यक्ष श्री चित्रकुमार, श्रीमती शिखि सिंघल, श्रीमती नीरू खुराना, श्रीमती नीलम अरोड़ा, श्रीमती शमी सचदेवा, डॉ. सत्यवीर, श्री आर.पी. राठी, श्री योगेश्वर त्यागी आदि उपस्थित थे।

Registration No. R.N.I. 39/57
Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11\6066\2018-20
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2018-20
Posted at N.D.P.S.O. ON 23/24-05-2018

बी.बी.के. डी.ए.वी. अमृतसर कॉलेज में यज्ञ और रक्तदान शिविर का आयोजन हुआ

बी.के. डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर के प्रांगण में द्वि–दिवसीय कार्यशाला के अन्तर्गत पावन यज्ञ और रक्तदान शिविर का आयोजन किया गया। प्रथम दिन आर्य युवती सभा के तत्त्वावधान में यज्ञ किया गया जिसमें मुख्यातिथि के रूप में श्री सुदर्शन कपूर, अध्यक्ष, स्थानीय प्रबन्धकर्त्री समिति पधारे।

यज्ञ, उपरान्त प्राचार्या महोदया ने छात्राओं को सम्बोधित करते हुए महात्मा हंसराज के जीवन पर प्रकाश डाला और छात्राओं को उनके जीवन से प्रेरणा ग्रहण करने के लिए कहा। उन्होंने कहा कि महर्षि दयानंद का स्वप्न नारी को सशक्त एवं आत्मनिर्भर बनाना था, इसीलिए उन्होंने स्त्री–शिक्षा प्रारम्भ की। महात्मा हंसराज और महर्षि दयानंद की शिक्षाएँ तथा उनके द्वारा दिखाया मार्ग आज भी प्रासंगिक हैं आवश्यकता है, उसपर चलने की।

मुख्यातिथि श्री सुदर्शन कपूर ने भी छात्राओं को उनकी भावी परीक्षाओं के लिए आशीर्वचन तथा शुभकामनाएँ दीं एवं जीवन–पथ पर सदैव अग्रणी रहने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने कहा कि महात्मा हंसराज जी ने प्रथम डी.ए.वी. विद्यालय में प्रिंसीपल के रूप में अवैतनिक सेवा की तथा जीवन पर्यन्त महर्षि दयानंद द्वारा दिखाए मार्ग पर चलते हुए आर्य समाज का प्रचार–प्रसार किया।

दूसरे दिन रक्तदान शिविर का आयोजन महाविद्यालय के रैड क्रॉस यूनिट द्वारा यूथ सर्विसिज़ पंजाब एवं ब्लड् बैंक, गुरु नानक कॉलेज, अमृतसर के सयुंक्त तत्त्वावधान में किया गया। इस अवसर पर विशिष्ट अतिथि के रूप में ए.डी.सी.पी. श्री लखबीर सिंह उपस्थित रहे।

रक्तदान शिविर के मुख्य अतिथि श्री लखबीर सिंह ने स्वयं इस अवसर पर रक्तदान देकर छात्राओं के समक्ष एक उदाहरण प्रस्तुत किया। इस शिविर में कॉलेज की छात्राओं ने भी बढ़–चढ़कर भाग लिया। इस अवसर पर कुल 54 यूनिट रक्त छात्राओं एवं कॉलेज स्टाफ द्वारा दान किया गया।

पश्चिम बंगाल प्रक्षेत्र में एक और नवीन डी.ए.वी. विद्यालय का उद्घाटन

डी.ए.वी. कॉलेज प्रबंधकर्त्री समिति के निर्देशानुसार पश्चिम बंगाल प्रक्षेत्र की सह–निदेशिका श्रीमती पापिया मुखर्जी के मार्गदर्शन में पश्चिम बंगाल प्रक्षेत्र के हल्दिया में डी.ए.वी. विद्यालयों की शृंखला को आगे बढ़ाते हुए एक और विद्यालय का शुभारंभ किया गया। इस विद्यालय का शुभारंभ बृहद् यज्ञ से किया गया। यज्ञ के मुख्य यज्ञमान डी.ए.वी. मॉडल स्कूल, खडगपुर के प्राचार्य श्री एन. के. गौतम रहे। यज्ञ में विशिष्ट अतिथि आई.ओ.सी. के वरिष्ठ पदाधिकारी श्री एस.एन. झा, जी.एम. एच.आर., आई.ओ.सी. लिमिटेड हल्दिया रिफाईनरी और श्री अभिजीत गुप्ता सीनियर डेपुटि फाइनेंस मैनेजर, हल्दिया, डॉक कॉम्पलेक्स कोलकाता पोर्ट ट्रस्ट तथा श्री पी.के.दास सीनियर डिप्टी मैनेजर हल्दिया डॉक कॉम्पलेक्स कोलकाता पोर्ट ट्रस्ट ने भी यज्ञ में विशेष आहुतियाँ दी।

पश्चिम बंगाल प्रक्षेत्र की सह–निदेशिका पापिया मुखर्जी ने बताया कि डी.ए.वी. हल्दिया का डी.ए.वी. पश्चिम बंगाल प्रक्षेत्र का अंश बनना हमारे विकास की शृंखला में एक कड़ी है। हमारी सदैव कोशिश रहती है कि हम अधिक से अधिक विद्यालयों की नींव रख सकें ताकि डी.ए.वी. के माध्यम से अधिक से अधिक वर्गों तक पहुँचकर उन्हें पाश्चात्य और वैदिक दोनों प्रकार की शिक्षा प्रदान कर समाज में ज्ञान और चेतना की रोशनी फैला सकें। यज्ञ ब्रह्मा श्री प्रणव आर्य ने यज्ञ के वैज्ञानिक स्वरूप पर प्रकाश डाला।

इसके पश्चात् विद्यालय की शिक्षिकाओं द्वारा डी.ए.वी. गान और छात्र–छात्राओं द्वारा कुछ मधुर ईश्वर भक्ति भजनों की प्रस्तुति की गई। अंत में डी.ए.वी. मॉडल स्कूल, खडगपुर के प्राचार्य श्री एन.के. गौतम ने डी.ए.वी. विद्यालयों के लिए त्यागमूर्ति महात्मा हंसराज जी के तप, त्याग और 25 वर्षों तक डी.ए.वी. विद्यालयों की अवैतनिक सेवा पर प्रकाश डाला। उन्होंने बताया कि उनके तप और त्याग के फलस्वरूप ही आज डी.ए.वी. विद्यालय अविरल गति से आगे बढ़ते जा रहे हैं। उन्होंने कहा कि पश्चिम बंगाल प्रक्षेत्र की सह–निदेशिका श्रीमती पापिया मुखर्जी के मार्गदर्शन में इसी तरह इस क्षेत्र में डी.ए.वी. विद्यालय प्रभावी रूप से आगे बढ़ते रहेंगे। शांतिपाठ के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ।

हंसराज महिला महाविद्यालय जालंधर में मासिक यज्ञ

हंसराज महिला महाविद्यालय के नॉन टीचिंग सदस्यों द्वारा प्राचार्या प्रो. डॉ. श्रीमती अजय सरीन के साथ मासिक हवन यज्ञ का आयोजन किया गया, जिसमें मुख्य यजमान प्राचार्या जी सहित उपस्थित सदस्यों ने सर्वमंगल की कामना हेतु आहुतियाँ डालीं।

प्राचार्या ने अपने विचार प्रस्तुत करते हुए सभी को अपनी आय में से कुछ भाग समाज भलाई में योगदान करने के लिए प्रेरित किया। इसके साथ ही सभी सदस्यों को रोजाना कुछ अच्छा साहित्य पढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया।

श्रीमती सुनीता धवन संस्कृत विभागाध्यक्ष ने श्रमिक दिवस की बधाई देते हुए परिश्रमी बनने के लिए कहा। नॉन टीचिंग सदस्य श्री प्रद्युम्न ने अपने विचार में सर्वे भवन्तु सुखिनः की कामना की।

शाँति पाठ के साथ हवन यज्ञ का समापन हुआ। इस इवसर पर प्राचार्या जी ने उन सदस्यों को उपहार भेंट कर सम्मानित किया जिनके इस मास में जन्मदिन आने वाले हैं और उनके लिए अच्छे स्वास्थ्य की कामना की। अंत में प्रसाद वितरण किया गया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**